

१ कृषि माला

• उद्विया •

कृषि

गंगाधर मेहेर

सम्पादक

ब्रह्मलाल प्रधान



राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

प्रकाशक

बोधननाथ बट्ट

भारती

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

हिन्दीनगर, बर्धा

• • •

सहायिका मुरसित

प्रथम संस्करण—१००

वर्ष, १९१०

मूल्य—रु. २/-

• • •

मन्त्र:

बोधननाथ बट्ट

राष्ट्रभाषा प्रेम

हिन्दीनगर बर्धा

• • •

इर्ष्यक विषय है कि राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति वर्षी अपने कार्य करके २५ वर्ष सन् १९६१ में पूरे कर रही है। इस उपलक्ष्यमें मन्त्रये आभेवाले रजत-जयन्ती महोत्सवके अवसर पर सभी भारतीय भाषाओंके माध्य कविवीरक तथा उनके उत्कृष्ट कव्यक परिचय 'कवि-जी माला' की एकद्विस पुस्तकमें हिन्दी-तन्त्रनुवाद सहित प्रकाशित करनेकी योजनाके अन्तर्गत प्रस्तुत माध्य पाठकोंके समक्ष आ रहा है।

यद्यपि किसी भी भाषाके सर्वश्रेष्ठ कव्य-सर्जक निश्चय रूपसे एक कठिन कार्य है फिर भी अपनी सीमाओंमें ध्यानमें रखते हुए गण्यमान्य उम-उन भाषाओंके विद्वानोंकी रामसे ही पुस्तकके कार्य सम्पन्न किया गया है।

प्रत्येक पुस्तकके आरम्भमें जिस भाषाके कविकी रचनाओंका चयन किया गया है उस भाषाके साहित्यक परिचय और कवि विज्ञेयक परिचय दिया गया है। जिस भाषाके दो कविकीक चुनव किया गया है उनका पुनराव करते समय सन् १९० से पूर्वक साहित्य और १९० से बादक साहित्य—इस तरहसे एक विभाजन-रेखा खानमें रखी गई है। इसका कारण यह है कि लगभग सन् १९० के पूर्वके तथा १९० के बादके साहित्यमें प्रचलित विचार-धारामें एक विज्ञेय प्रकृतक अन्तर्भाव-सा क्या जाता है।

श्री प्रह्लाद प्रकाशजीन प्रस्तुत पुस्तकमें संकलित साहित्यके चुनने, सम्पादित करने और कव्यकाव्यके कुमारी रेणुबाला मिश्रा तथा कुमारी शिष्यमयी धनजीन अनुदित कर इस रूपमें प्रस्तुत करनेमें सहयोग दिया है। पुस्तकमें संकलित विच क कर्त्तिक मैनेजर 'राष्ट्रभाषा समवाय ट्रेस' कटकेके सहायत्वसे उपलब्ध हुआ है। संयोजकी आवरण डिजाइनके बन्ध देनमें श्री ली एन अडारकजी (डॉन, सर के के इन्स्टीट्यूट आफ् अप्पार्टिड आर्ट, कर्नाई) का उत्तम सहयोग मिल है उसके लिए समिति सदैव आभारी है।

इसके अतिरिक्त कर्नाई तथा अन्यथाय दृष्टियोंमें जिन-जिनक प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सहयोग मिल है उनके प्रति भी समिति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती है।

आशा है प्रस्तुत संयक पाठकोंके रुचिकर एवं उपयोगी प्रतीत होगा।

K. P. Singh

मन्त्री

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, बर्धा

अनुक्रमणिका

	पृष्ठांक
उडिया-साहित्य-परिषद [प्रारम्भ १०२० तक]	१
कवि-परिषद	३५
शास्त्र-परिषद	२३

कवि-धी मासा
उडिया



गंगाधर मेहेर

अनुक्रमणिका

	पृष्ठांक
उड़िया-गाहित्य परिषय [प्रारम्भम १०२० तब]	१
बदि परिषय	३५
बाम्य-सुअपय	५३

कवि-श्री माला
उड़िया



गगाधर मेहेर

अनुक्रमणिका

	पृष्ठांक
उद्दिष्टा-साहित्य परिचय [प्रारम्भ १०२० तक]	१
वृत्ति-परिचय	३५
वाच्य-मञ्चय	५२

उडिया साहित्य परिचय

[प्रारम्भसे १९२० तक]

उड़िया साहित्य परिचय

[प्रारम्भसे १९२० तक]

उड़िया भाषा और उसका साहित्य

• • •

उड़ीसाकी भाषाका नाम उड़िया है। किन्तु उड़ीसामें इस भाषाका उच्चारण ओड़िया है और देशका नाम ओड़िशा। ओड़िशाको ओड़ विषयसे व्युत्पन्न माना जाता है। इसका उत्पत्ति क्रम इस प्रकार है—ओड़विषय > ओड़विष > ओड़िष > ओड़िया या ओड़िशा। तात्पर्य मागधीका लक्षण है और उड़िया भाषामें मागधी प्राकृतके बहुतसे लक्षण पाये जाते हैं। संस्कृत ग्रन्थोंमें ओड़िका दूसरा रूप उड़ भी पाया जाता है और भरत-नाट्य-शास्त्रमें उड़विभाषा या ओड़ीका उल्लेख पाया जाता है।

सबराभीर बाण्डास लखल हाबिड़ोडजा

हीना बनेबराणा व विभाषा नाटक स्तुता ॥१०१५०

इससे पता चलता है कि इसी मन्त्री प्रथम दत्तात्रेयमें उड़िया भाषा विभाषा या ओड़ीके रूपमें सीमांतकी दृष्टिमें जाने लगी थी और भी बिल्के प्राकृत वैयाकरणोंके मतानुसार इसका आचार हाबिड़ वर्गकी भाषा थी। इसलिये प्राकृत सर्वस्वरान् मार्कण्डेयि वदा है—

शाक्यमित्री मोगातदेव धीरमेया दे

अर्थात् शास्त्रीय सङ्केत या उद्देश्य और धीरे-धीरे आदिक योगस औष्ठि या उद्दिष्ट भाषा बनी ।

ही शक्यता है कि प्रारम्भमें उद्दिष्ट भाषाका आधार शास्त्रीय या कोई शास्त्रीय भाषा हो। लेकिन आजकी उद्दिष्ट भाषाके अध्ययनसे पता चलता है कि यह कार्य वर्षोंकी भाषाओंमें अर्जुन है और इसका सम्बन्ध मागधी अथवा अर्धमागधीसे है। प्राकृत सम्बन्धकार राम चमनि शास्त्री आदि भाषाओंको मागधी कहा है।

उद्दिष्ट भाषा मागधी व अर्धमागधीसे सम्बन्ध रखनेका तात्पर्य है कि उद्दिष्ट-शास्त्रीयका सम्बन्ध अर्थात् प्राचीन शास्त्रीयके समान भारतीय भाषा साहित्यसे है। भारतीय भाषाओंके विकास-क्रममें आधुनिक भारतीय भाषा भाषाओंके पूर्व रूपमें विभिन्न प्राकृतोंकी अपभ्रंश भाषाएँ हैं। उद्दिष्ट भाषा भी प्राकृत प्राकृत अर्थात् मागधी अथवा अर्धमागधीसे उत्पन्न होनेके कारण पूर्वी अपभ्रंशसे सम्बन्ध है। बौद्ध गान भी बौद्ध के गानोंकी भाषा पूर्वी अपभ्रंश मानी जाती है। इसलिये बौद्ध गान भी बौद्ध को उद्दिष्ट साहित्यके भी प्रारम्भिक कालका अर्थ माना जाता है। वास्तुतः साहित्य शास्त्रोंके सिद्धांतों पर उद्दिष्ट भाषा है।

इन प्रकार अपभ्रंश साहित्य या सिद्ध साहित्यको उद्दिष्ट-शास्त्रीयका आदि काल माना जाए तो उद्दिष्ट-शास्त्रीयका निम्नलिखित प्रकारसे काल-विभाजन किया जा सकता है —

काल-विभाजन

- (१) आदि युग—अर्धमागधी या मारवाडीय युग ११ वीं प्रथमाब्दे १५ वीं शताब्दी पर्यन्त।
- (२) मध्य युग—१५ वीं शताब्दीसे १९ वीं शताब्दीक प्रथम भाग पर्यन्त।
 - (क) पूर्व मध्य युग—अर्धमागधी या प्राचीन युग या अर्धमागधी युग १५ वीं शताब्दीसे १७ वीं शताब्दी पर्यन्त।
 - (ख) उत्तर मध्य युग—गिरिवासी या उत्तर मध्य युग १८ वीं शताब्दीसे १९ वीं शताब्दीक प्रथम भाग तक।
- (३) आधुनिक युग या स्वतन्त्र काल—१९ वीं शताब्दीक प्रथम भागके बाद।

यहाँ इन कालों का उल्लेख कर देना अथवा देना कि किसी भी कारणसे उद्दिष्ट-शास्त्रीयका काल-विभाजन करना इसका मुख्य नहीं है। साहित्यकी प्रकृति या काल किसी एक दिग्में ही नहीं चलता बल्कि अनेक दिग्में चलता है। साहित्यकी प्रकृति अनेक दिग्में चलने के कारण ही युग १। बानी है और उस युगके बाद भी काल दिग्में चलता रहता है।

आदि युग

उड़िया साहित्यके आदि युगको सारला-युग भी कहा जाता है। क्योंकि इस युगके मुख्य कवि थे सारलादास। किन्तु इनके पहलेका साहित्य भी इसमके अन्तर्गत है। पहले कहा गया है कि बौद्ध गान ओ बौद्ध को उड़िया साहित्यके प्रारम्भिक काव्यका ग्रन्थ माना जाता है। अतएव यह भी आदि युगम अन्तर्भूत है। भाषाकी दृष्टिसे साम्ब तो ही। बान्धुपा घबरीपा लोहिया आदि उड़िया थे भी। इनके अतिरिक्त गोरख मीननाथ ठक्तिपा हाकिपा आदि सिद्धोंका उड़िया-साहित्यमें बार-बार उल्लेख पाया जाता है। साहित्यिक घाटी दृष्टिसे भी 'बौद्ध गान ओ बोद्धा' में प्रतिक्रमिक विचारघाट आदि कालीन और पूर्व मध्य कालीन उड़िया साहित्यमें मिलती है। यह परम्परा मध्य युग तक चलती आई। सारलादासके 'पुणर्गो' नारायणानन्द बबभूत स्वामीके 'श्रु सुधालिधि और 'पञ्च सखा' साहित्यमें धूम्य सङ्घ समाधि गीतारम्भ निरञ्जन, काव्य साधना योगरत्न आदिकी कर्षा बार-बार देखनेमें आती है, जो 'बौद्ध गान ओ बोद्धा' में भी पाई जाती है। 'बौद्ध गान ओ बोद्धा' के 'बोडियाण' का भी 'बोडियाण' ही सम्बन्ध है जो कालिका ठक्के चार क्षेत्रोंमेंसे एक है। बाकी तीन पूर्वगिरी कामाख्या और भीरुह है। एक 'बोडियाण' स्थान बम्बलम्बे उद्यानसे सम्बन्ध हो सकता है। किन्तु चार पीठोंमेंसे एक 'बोडियाण' उड़पीठ या उड़ीया ही है। केवल रूप घाट की ही नहीं रूप मा लम्बोंकी भी परम्परा चली आ रही है। उन गानोंके राम 'परमञ्जरी' (पट्टमञ्जरी) 'मुञ्जरी' (गुञ्जरी) 'बेयाण' (बेयाण) 'भैरवी' 'कामोद' 'भगवी' (बनाधी) 'रामकी' (रामकेरी) 'बटाकी' 'माकसी' (माकधी) आदि गान भी उड़िया काव्य इन्हींमें पाये जाते हैं। बोहे भी लिखे जाते व। किन्तु काव्य बम्बोरयमें उपेन्द्र भञ्जने अपने बोहोंके लिखनेका उल्लेख किया है। बोहकी बुद्धा व बुद्धा भी कहा जाता था। परन्तु कालमें अबतक यह घाट लीन ही गई। उड़िया-साहित्यमें संख्याभाषाका भी बहुत प्रयोग मिलता है। 'बौद्ध गान ओ बोद्धा' में टेष्टन पादका संख्याभाषामें एक गान मिलता है —

डालत	भोर	घर	नाहि	बहुवेवी
हाकि	आत	नाहि	गित	आवेपो ।
बेडा	संसार	बहुहिल	आम ।	
बुहिल	बुधु	कि	बेडे	पामाय ॥
बलद	बिआएल	पबिआ	बैले ।	
पिडा	बुहिदे	ए	सिना	सामे ॥
ओ	सो	बुपी	सोघ	निबुडी ।
ओ	पी	बीर	सोड	सापी ॥

मिठै मिठै बिभाला बिहे बय बुझम ।

टेक्यन पाएर चीत बिचरिसे बुझम ॥

1 टीक इमी प्रकारका मन्थनाभावामें गौरवरा एक मजन उड़िया
मलता है - यथा -

कहिते कि प्रते जाइ रे मनुजा ।

बनस्तरे पाव रसा हराई बापुभी जाये भडाइ ॥

इडिठकि कलानि आम्बहुला हाडा चालपी कि कसा खर ।

टोकाइ कुन्दाइ बापपरे गले छाञ्चुनि बभिसि घर ॥

कुम्भीर कु कसा बात कक खर देखा गला बेच पये ।

हरिजा बित्तरे छिछि न पाइला साइला मरिख बभे ॥

बैद्यम मडिअपि जुमुक्ति कडाउ नेउल नाकरे गुषा ।

मुषा शोइअछि रल पलछकरे मञ्जारि बिम्बे बिम्बणा ॥

पिम्पुडि बापुडा बिमा हीइबला मगरे उड़िला धूमि ।

बिलर कडकडा पाइल छइले बैद्यप देले बुलहुनि ॥

×

×

×

करेछ बापुडा बड़ बुझिआलि चालुमिरे मुहे रहि ।

सि बेहि जाइव पोरेक हाल मे बसे बहरापी होइ ॥

योग्यताके नामम इस प्रकारके बहुरंगे मजन उड़ीयाके लार्गामें प्रचलित
है । उनके नाममे मन्थान योगधारण नामक एक पुस्तक भी पाई जाती
है । मानवारीकी खर माधना इनका प्रतिपाद्य विषय है और यह एकनाथ पन्धरी
पुस्तक-भी प्रतीय होती है । इनकी भाषा उड़िया है और इनका भी उड़िया
साहित्यके आदि बालमें रखा जाता है । किन्तु मन्थन यह योग्यतापरी सिद्धी है
या नहीं इनम मन्द होना है जैसे कि 'योग्यतापरी' आदिके बारेमें । योग्यतापरी
भाषा ही उड़िया नहीं थी । ही मन्थना है दुगरे सिमीने सिद्धक योग्यताके
नामके बना दिया है । या घर भी हो मन्थना है कि योग्यतापरी सिद्धी हुई यह पुस्तक
नाम बममें जनबोध्य होनेके लिए परिवर्तित हो गई है । सिद्ध बन्धुन और भाषाम
भी । सिद्ध इनका भी मन्थ है कि उड़िया-साहित्यके आदि बालम नाथ मन्थनापरी
प्रभाव स्पष्ट है । इस बरगाममें सिद्धके वा भी रखा या मन्थना है और यह
भी एक नाथ मन्थनापरी मन्थ है । मानवाराके 'मन्थनापरी' में भी सिद्धके
वा उल्लेख आता है और इनकी मानवारा-सुरी माणिक्य वा मन्थने है । सिद्ध इनका
बाल निरिचय नहीं है । अभी तक यह पुस्तक छपी भी नहीं है । इनकी ही
बोदिया सिद्धी है । इसीमें विषयबन्धु नाथ मन्थना है किन्तु मन्थरी भाषा
अनेछाह्य प्रतीय भाषाम गन्थी है । जैसे -

येक मुहूर्त हुए अल्प बिलम्ब
 (घु) निरहें निरलारे सेह अल्प ।
 सीसुमुना मध्ये शु पोति प्रकाश
 बरति नाच-मेठी सिम्पकक विद्याश ॥

इसकी तुलना बोझाकोप के बोहोसि की जा सकती है। इसमें सिधुबेद का इस प्रकार अर्थ दिया गया है — “दुइ कर्मरे तुछा देह भल करि बुयीन । एउ पाहान्ति उठी लय करिब । ये बय धुनि भुमइ जाकाहार मध्ये । येहाष्टु धिनुबेद बोलि ।” [दोनों कानोंमें भौंगुली बेकर खपड़ी ठरह बन्व करना । एउ भीर उठकर चय (ध्यान) करना । जाकाघमें जो ध्वनि सुननेमें आती है उसको ‘धिनुबेद’ कहा जाता है।] ‘सिधुबेद’ माचोंका खास बेद तो नहीं है, इसमें भी संभ्याभाषाका प्रयोग किया गया है —

सपत समुद्रे बिला न जाइसा निर
 मास्तार गन जाइ न जाइसा खीर ।
 येड़े बड़ जाइसा तेड़े बड़ अछि
 तासकने परते हुम गुफमुले पुछि ॥

इन बोहोको पोधीमे स्मोक कहा गया है और गद्यमें इनकी टीका भी गई है। उड़ीसाके संस्कृत नाटकोंमें एक विभिन्न परम्परा पाई जाती है। परम्पराके अनुसार संस्कृत नाटकोंमें संस्कृत और विभिन्न प्रकारके प्राकृत प्रयोग किये जाते हैं। किन्तु उड़िया-छाहिरयके आदि प्राचीन संस्कृत नाटकोंमें प्राकृतके बखड़े बानमें उड़िया भाषाका प्रयोग किया गया है। कपिलेश्वर देवके परमुराम विजय नामक संस्कृत न्यायोंमें एक उड़िया भाग पाया जाता है जैसे —

अथ रायेण पोबते
 केवल भुनि कुमार परशु बलिब कर
 बामेण छोड़े धनु धरना
 कोपेन बोलइ बीर त तु से बमिलू मो तात
 भाव तोर छविइ माच ना ।

धुप राजन हो किये तोर राउरे बहू बघेना । इत्यादि ।

कपिलेश्वर देव (ई सन् १४११ से १४६७) मायकापाञ्चीको छाहिरय माना जाए तो वह भी आदि बालके अन्तर्गत है। यह अवसाव मन्दिरमें सुरक्षित है और आनाम बुद्धिजके समान इसमें उड़ीसाके राजबलोंका और अवसाव मन्दिरके नियमोंका इतिहास सिपिबद्ध है।

क्रि.वन्तीके अनुभार मग बंगक प्रथम राजा चौसर्गदेवने ई सन् १०४० (वन्द २४ दिन शुक्ल दशमी दशाहराके दिन) इस मन्दिरको ध्वस्तना शुरू किया था। मेरिन भाषाकी दृष्टिसे विचार करनेपर यह इतना प्राचीन नहीं मान्य होता। हो सना

है कि इसकी भाषा परलती पञ्जी लेखकोंने सुबोध करनेके लिए भाषाकी बरत दिया हो। इसरोका मत है कि यह मयलकालमें १६ वीं सताब्दीमें रामचन्द्र देवके राजत्व कालमें लिखवाई गई थी। मादलापाञ्जीके अतिरिक्त उड़िया मयमें कुछ बठ कवावा साहित्य भी मिलता है। उसमें सोमनाथ बठ कवा अत्यन्त प्रसिद्ध है। इसका काल तो निश्चित नहीं है परभावामे यह भी प्राचीन-सी प्रतीत होती है। इसमें सोमनाथजी की पूजाका विधान है। इसके अन्तर्गत नाम अज्ञात है। लेकिन इसके बरत परमेस्वर मित्र और सोडा देवी पार्वती हैं। इस कवामें बौर विष्णुमाजीन आने हैं। इसकी भाषा परिमार्जित और शैली प्रवाहणीक है।

इस कालका और एक अत्यन्त महत्वपूर्ण ग्रन्थ है बड मुधानिधि। इसको भी सारका-मूर्ध काल (१३ वीं या १४ वीं सदी) का कहा जाता है। यह पुस्तक सम्पूर्ण प्राप्त नहीं है। प्राप्त अंग सम्पूर्ण छाना भी नहीं है। इसके लेखक एकाग्रवात्म विधानी नारायणानन्द अवलूत स्वामी हैं। इसमें एक पापघट्ट घोषीका वृत्तान्त वर्णित है और यह एक दीव सम्प्रदायका ग्रन्थ-ना मान्य पड़ता है। इसकी भाषा बग्न दूध और अत्यन्त प्रवाहणीक तथा दीवी परिपक्व है। पढ़नेसे मान्य होता है कि यह वृत्त पल्लि मयमें या दक्षिण वृत्तमें लिखा गया है। इसकी रचनामें अनुमान और यथार्थ आदि पूर्ण मात्रामें मिलते हैं। कही-नहीं अग्रराघट क विषयका पालन किया गया है। अतिमव चरणन नामके चरणगोमिने एकने आदिमें 'अ' से 'र' तक वर्ष कम एकरर छिबकी स्तुति की है। गणमुख यह एक अर्ध ग्रन्थ है।

कला चउनिधा भी सारका-मूर्ध काल या आदि कालका कहा जाता है। इसके लेखक कच्छावाक हैं। लेकिन उनका काल निश्चित नहीं है। यह एक हास्य रस प्रधान काव्य है और इसमें शिवजीकी वर पात्रा और पार्वतीके नाय विवाहा कथन है। इसमें शिवजीकी अत्यन्त वृद्धके रूपमें चित्रित कर हास्य रसकी अलग-गली गई है।

सारकावाक मय कहा जाए तो सारकावाक ही उड़ीसाके प्रथम आनीय महाकावि हैं और उड़िया-नाट्यके आदि कालका प्रतिनिधिग्रन्थ कथन है। उद्दाने करनेकी दृष्टि और जगमें अज्ञानी मूर्ध अज्ञान आदि कहा है।

सारकावाक उड़ीसाके मूर्धवती प्रथम गद्या कलावि कलिन्त देवके राजवाकमें हुए थे। उनका मय काल ईसवी अन् १४३३ से १४६७ तक था है। वृत्त जोड उनको मय कालके कलिन्त कलिन्त देवका मयवाक्य आनन्द उनका काल ईसवी अन् १३०० से १३६० तक जाने है। विष्णु मूर्धवतीय कलिन्त देव ही सारकावाकके लेखके गद्या थे पर का अग्रि कथना है।

उनकी तीन कृतियाँ उपलब्ध हैं— बिल्का रामायण 'महाभारत' और 'वीरपुत्र'। सारलादासके अपने कथनके अनुसार बिल्का रामायण उनकी रचना है। इसमें देवीरूपमें मीठाकी महत्ता बतलाई गई है।

यह बिल्का रामायण 'अद्भुत रामायण' पर आधारित है। बिल्कु 'अद्भुत रामायण' का सहस्र पिर बिल्का रामायणमें सहस्रभुज हो गया है और बहूका नर यही बिल्का हो गई। 'बिल्का रामायण' में नारी और अश्विनीका प्राधान्य दिया गया है।

सारलादासके लिखे हुए ग्रन्थोंमेंसे यह अग्रिम है। 'बहूवीरपुत्र' में सारलादासने खूब कहा है—

प्रथमे रामायण द्वितीये महाभारत

तृतीये केवल नुं कछई भागवत।

[मैंने प्रथम रामायणकी रचना की उसके बाद महाभारत की और उसके बाद भगवत की।]

यहाँ रामायणका अर्थ है— बिल्का रामायण और भागवतका अर्थ 'वीरपुत्र' या 'बहूवीरपुत्र' है। बिल्का रामायणमें त्रिम प्रकार अश्विनीका माहात्म्य बताया गया है, उसी प्रकार बहूवीरपुत्रमें भी। इसकी रचना मार्कण्डेय पुराण-हृषिकेश-विरचित उपाख्यान और देवी भागवतपर आधारित है फिर भी इसमें मौलिकता है। बहूवीरपुत्रमें महिषासुर, मणिपिण्डके रूपमें वर्णित है। यह कल्पिविहस्र अशुका पुत्र था। उसके अग्रमके बारेमें कहा गया है कि कल्पिविहस्र रमणसे तट होकर उसकी पत्नी अश्विनीका सिङ्गलम भाग गई। बहू महिष कपिनी तम हाके साथ वनके वाहन कृताशुक महिषके बलपूर्वक रमण करनेसे महिषासुर पैदा था। कपिल कबिले अम्बाद पाकर कल्पिविहस्र सिङ्गल गया और उसने अपनी पत्नी अश्विनीकासे भेंट की। उससे सब सुनकर उसने महिषासुरको अपने पुत्रके पत्नी ब्रह्म किया। इसके जाने महिषासुरकी उपस्था शिवसे बर प्राप्ति विभिन्नय महाशक्तिके साथ बिबाह शुभम निशुभका स्वयंवर आक्रमण दुर्गाका आधिपत्य स्वपिरिमें अवस्थान अश्व-मुष्ट शुभम-निशुभ कान्तिगाथ रक्तवीर्य वीरवष्टका अश्विनीका आदिका बहू महिषासुरका रत्नगिरि उत्पादन शुभ उपशुभका अ और अन्तमें महिषासुरका बहू बलिण है।

इसमें मूत्र-आकितियों आदिका बहू अत्यन्त मनोरम है। इसमें देवी देवी अनेका शक्ति अर्थात् प्राधान्य दिखाया गया है। यह शक्ति वृत्तमें लिखा गया है। अर्थात् वहाँकी अक्षर संख्याका कोई नियम नहीं है। इसमें एक पत्रिमें तैल अक्षर तो दूधमें तैल है बिल्कु अन्तमें तुक मिश्री है। लेकिन आजके मूत्राणके अधिकारियोंने इसे बदलकर समाज अर्थात् चतुर्धाजनोंमें परिणत कर दिया है और बहू आज उपलब्ध है।

‘महाभारत’ सारकाशासका सबसे बड़ा ग्रन्थ है और सबसे ब्यारा प्रसिद्ध भी। इसे भी अतुरंधासरोमें परिष्कृत कर मुद्रित किया गया है। केवल उमरा एक गुड संस्करण भी निकालनेकी व्यवस्था हो रही है।

यह विभाग ग्रन्थ मूल संस्कृत महाभारतका अनुवाद नहीं है। यह इनका आधार तो है लेकिन इसमें बहुत व्यतिक्रम है और पर्व क्रममें भी।

मूल महाभारतके तीन पर्वोंका नाम सारकाशामने महाभारतमें नहीं है वही तीन हैं—तीर्णिक अनुमानन और महाप्रस्थान। इसके बदलेमें तीन नाम मिलते हैं—मध्यपरा कोईकरा या ऐषिक अपरान् सारकाशामने आदि पर्वको तीर्थकर भी पर्व कर दिया है मध्य और परा और तीर्थिक पर्वके बदले पाईसबा या ऐषिक। मूल महाभारतमें महा पर्व मध्य पर्वका एक उपपर्व है और ऐषिक पर्व तीर्थिक पर्वका एक उपपर्व। यही बातों एक-एक पर्व है अनुमानन पर्वको उड़ा दिया गया है और महाप्रस्थान पर्वको स्वर्गागोत्रण परमें जोड़ दिया गया है।

पक्षमें कहा ही गया है कि सारकाशामना ब्रह्मार्थन मूल मनुज महाभारत का धनवाद नहीं है उनपर सिद्ध आपादि है। पर क्रममें व्यतिक्रमके अभावका पर्वोंकी क्रमादिके बर्तन-क्रममें भी व्यतिक्रम है। यही यही मूल कथाओंकी क्रियात्मक छाड़ दिया गया है। यही यही मूलम अनुपकरण समावन्तुओंकी सम्मिलित बना दिया गया है और पत्नी-पत्नी मूल कथाओंमें व्यतिक्रम किया गया है। महादकके नाम अर्द्धमना वड मूल महाभारतके वन पर्वमें दिया गया है किन्तु सारकाशामने महाभारतके आदि पर्वमें। इन्ही प्रकार उद्योग पर्वका अर्धोपासमान आदि पर्वमें है। वनकामके प्रथम भागमें बाणबाणे भोजन और तीर्थीक ऐषिकरा वच किया था। इसका उभयैय सांगसाशामने नहीं किया है। दुर्गाइन्के उर भय-धर्ममें मूल महाभारतका सारक्यन अपासमान साण्णारीको दीहृणवरी साण्णना इत्यादि विषय भी साण्णशामने छोड़ दिया है। जो कथार्थ मूलमें नहीं है इस प्रकारकी कथार्थ भी छोड़ दी गई है। उना कि उद्योग पर्वमें बावना मुनता पर्वक अर्धभौतीका विवरण इत्यादि। इसके अन्तमें भी सिद्ध साण्णिके उरंगानमान दुर्गाइय अर साण्ण कथनेके लिए संघार नहीं हुए तर कामकी दुर्गाइय कथनी है कि कथा लोकोके कथनको छाड़कर लखना कथा गुननमें आये गेया है उना कि बावना मुनता। मुनमता अन्तमें लखना मुनता का अर्थ है। अर्धमने लख नामका एक शब्द बर्तन आरत इस कथा और कथनी नहीं करने कि उमने लोकाशाम मुनतामको सांग। बर्तन उर व/ लकी कथार्थ लखना मुनता उर बावनेबावनीका सांग। उर लखना मुनताके अर्थ है कथनी पर्वका का अर अर उर लख, और मां अर लख देनेके लिए नहीं लख। तीर्थिक अनेक बार का के लख बावना मुनता उर व/ साण्ण लखना लो क/ लख बावना और लख कथनेका भी कथ क भावा और क/ लख। लकी साण्णिके लखना लखना। लखने का देउर बावना

मृतको सोहेके बाबमें पकड़ा। मृतने साफ किए हुए एक सी बस्ती मन ठिक देना माग्य किया। यह उगीमाकी सोलकथा है।

बकमौहों की कतली भी इसी प्रकार की है। यह कहानी भी उगीमामें काफ़ी प्रचलित है। मारकावासने अपनी महाभारतमें इसे स्वाग दिया है। इट्ण-बेनी लकीके तटपर मेहन नामका एक बकसीहों था। काठ काठनेक मिशाम बहु कुछ नहीं जानता था। एक बार जब बका तुफान आया तो काठके बिना उमने एक दिनका उपवास किया। बूमरे दिन जब उमकी पत्नीने जंगलसे काठ सनेके लिए कहा तो वह बुरहाड़ी भेकर बगलको गया। रातेमें एक मन्दिरमें सो गया। जब सोम हो गई तो वह बहरावर उठा और मन्दिरके भीतर जाकर उमने देखा कि वहाँ बड़ा विष्णु और महेशकी बाह (काष्ठ विष्णु) की बनी हुई मूर्तियाँ हैं। अत उमन विष्णुकी उस प्रतिमाको जाकर उसको अच्छा मूखा का मसकर काटना प्रारम्भ किया। यह देखकर विष्णु बहरा बए और उसके कलनेके अनुसार सीम दिग्ग भोजन दिया। तीन दिनके बाद जाकर वह फिर काटने लगा तो हुनेमाके लिए उमकी व्यवस्था हो गई। यह देखकर बकता नामके उमके पड़ोसीने भी ऐसा ही किया तो महेशवर, बरु रूप धारणकर, उसको लखसे खीरन लये। अन्तमें पूछा कि यह प्रसिद्द क्यों? मिशबीने का—मूख और बानी, बेन और बानबमें अन्तर होता है। तुम बानी हो और वह मूख है।

पारदा-उपाप्मान भी मूख महाभारतमें नहीं है। पारदा एक कुत्सित पुरुष था सहेदेके कन्यानुसार उस पकड़कर भीमने मूख-सोचके एक स्तम्भस जमे बाँध दिया रातको मृत बाबना मृत प्रेठ पिशाच योपिनी राखमी पिशाचिनी आदिने जाकर तथा बाइमीकी बंधा देखकर खुशी प्रगट की अकिन भारतको पहुँचानकर और उसे कृत्तिम तथा अपवित्र नामकर के उस छोड़कर बल गए। अन्तमें अम्बिका सिवार और जागकी सिवारिन बाई और उन्होंने भी उस को दिया किन्तु उगीके सामने अम्बिका सिवारने महाभारत बुटके १८ चिन्तमें हुनेबाला मारी घटनाबाकी अविष्यवागी की और अपनी अपवित्रताके कारण भीरित कौन्कर यधिन्द्रक सामने सब बर्षन किया। वह पूर्व जन्ममें जिस समय जमसन मयत्रा और उमकी पत्नी मेनाकी बरदा मशतिकाकी इन्के धानानुसार कुबरेक पाम ल था रहा था उस समय रातेमें उसस रमन करनेके कारण कुबरेने उस माग दिया था। यह कथा उगीमाकी ही है।

स्वर्गगोत्रक समय मारकावास पाण्डवोंका उगीमामें भीषण काए थे। उस समय के चित्रोत्पका पाकर धर्मनगर या याजनगर (यात्रपुर) पहुँचे तो उगी पामबासी अमरावतीके इग्माहुकी कन्या मुहानोम सुधिन्द्रिका विवाह हुआ। मुहानोम आतरमें था कि वह विवाहके दिन मर जाएगी लेकिन अर्जुनके पराक्रमक कारण यम उस नहीं ल जा मरा।

गौतम्युद्धके बाद बुर्जोअज अपने लड़के लक्ष्मणगुमारकी पीठपर रख गरी सत्कार करते हैं यह बड़ा काव्यिक वर्णन है। यह बंगलाके बागीबाब महामातयें भी देखनेमें आता है तथा परबर्ती कवि रामानाथ रायने उन्हीके आकारपर एक लम्बी कविता लिखी है।

इस प्रकार हम लोग देखते हैं कि हममें उड़ीसाकी किवदंतियाँ हैबनेबिया गरी-यहाड तीर्थ भूमिवाँ सामाजिक रोडि-रिबाज बर्म-सम्प्रदाय लभी सन्निविष्ट है। नाम बरभकर अन्य नापोंसे उस बालका इतिहास भी हममें लिपिबद्ध है। लब बडा बाए तो यह एक विद्याल जातीय ग्रन्थ है। यह बाल इतिहास और पुरातनका यय या हम युगकी मुख्य प्रवृत्ति ऐतिहासिक या बौराजिक बी। इनी युगमें उडिया साहित्यका बलिष्ठ उन्मेष हुआ था।

उडिया साहित्यका यह उन्मेष निरुक्त संस्कृत साहित्य या युगनामि आकार नहीं हुआ बल्कि इन काममें मौलिक रचनाएँ भी हुईं 'कड मुबानिधि की लख और भी मौलिक रचनाएँ हुईं थी। बार्बडशामरी केतवकी इनी प्रकाशकी एक रचना है। यह भी बीनीगाके त्रममें लिखी गई है लेकिन हममें बौद्ध (बोयल) को मगबाधन किया गया है। हममें बौद्धिक बबुरा जालेके बाद पुन विरहित ययाया कोबलतो लम्बीधिन कर अपनी मार्मिक व्यथा व्यवन करते हैं। यह बाल्म्य रनाए एक अनुपम लखकाव्य है। इनकी बाबा अय्यन लरन और बाब बने ही मर्मलयी हैं।

कड उडिया साहित्यका प्रथम बौद्ध लखकाव्य है। इसके बाद उडिया साहित्य कोडलि साहित्यमें अय्यन लमड हुआ और बरुबलगाबोडि बरुबल बानने 'बाल्मानी बो'लि' संकर दानने 'बाग्न कोडलि' नाप दानने 'आनीरब बाडलि' तथा हुनरोने मीबर्ती बौद्धियाँ लिखी। बरुबलगाबोके पबभाबदानने इगलर एक 'अर्ब बोडलि' लिखी त्रिममें इकरा गरीर लब परक अर्ब किया गया है।

इकरा हुनरा एख बडाबाब है। और भी रामबग्गीके व्यानाग लख परक दाय है। इतने गिब-गार्वनी मगबाब है। और भी रामबग्गीके व्यानाग आनीरब इकरा बनिगाड बिरब है। लख बरब दग्बादी छोडकर इग बुनमें नाय दन्व भी लिखे ल। इनी ययम अर्बदानने 'गब-बिबा (राब-बिबा?) राबक एग बाबा लिखा था य बाग्ला दानके परबर्ती थे। 'गब-बिबा' के बालि मुपीर और इनमानक उय बुलाग बाग्ला दानके अनुभार दिए लए हैं। यह दाय बाएट छापी (लगी) में लिखा गया है और बिमल्य उग्रदाय बिबिन लल गालि-नयंका व्यरहार किया गया है। इनके विरामिकके निरामय के निरब बरगुदाय दान-बलन लल गबबनिग बनिा है। इनकी बाबा प्राचीन-नी लगी है। उगेड बरुब उनके विराम' धारुबय प्ररुब और उनके पृबबर्ती बरि

प्रताप राम कातिबखाम प्रभुतिने 'राम विद्या' का उल्लेख किया है। इसी युगका और एक काव्य है उपासिकाय । इसके रचयिता गिधुर्मकर राम हैं। इनका समय निश्चय रूपसे निर्धारित नहीं है किन्तु प्रतापराय कातिबखाम घनश्रवण श्रवण प्रभुतिने इनके उपासिकाय का उल्लेख किया है। इसमें बाणामुरकी कथा उपा और प्रह्लादके पुत्र अनिरुद्धका विवाह बर्णित है। इसमें मारकाशामके महाभारतमें बर्णित 'उपा-हरण' का प्रभाव परिमलिन होता है। उपाका पिता बाणामुर नरुन्ध मुन्य या और गोपितपुरका राजा था। मारकाशामके अनुभार गोपितपुर केनरिणीके लठपर था। इसमें अनुभार रम प्रधान है और वहीं-वहीं बहय और और रमके छोट भी दिखाई पड़ते हैं।

इस युगकी और एक विशेषता है कि इस कालमें संस्कृतका काव्य प्रगति उद्विगममें अनुबाह भी प्रभुन किया गया है। कवि घरणीबग्ने अददेबके पीठ-पीठिका का उद्विगममें पद्यानुबाह किया है। अनुबाहकी भाषा सरल और भाव प्रकाशमें समर्थ है।

इस प्रकार हम कहते हैं कि इस युगमें उद्विगम साहित्यका विभिन्न विभाषोंमें विकास हुआ।

मध्य-युग

मध्य युगका दो भागोंमें विभाजन किया गया है—पूर्व मध्य युग और उत्तर मध्य-युग।

(क) पूर्व मध्य युग पूर्व मध्ययुगकी सक्रिय युग भी कहा जा सकता है। केवल यह सक्रिय उद्योगरामा नहीं ज्ञान मिथ्या है। प्रेम प्रधान नहीं योग प्रधान है। इसमें काय माधना और विष्णु-ब्रह्माण्ड तन्त्र प्रधान है। इस भाँति कालके प्रसिद्धि उद्विगममें तो उद्विगममें प्रधानतया तीन धाराएँ नजर आयेगी—उद्विगम धारा उद्योग धारा और काव्य धारा। उद्विगम धारा में बौद्ध मान भी होना ही मुख्य साधना भागी है। यहाँ परमें है —

पेरबमि बहु विह सखई धुन
बिअ बिहृमे वाय न पुअ
बिअ सखई धुन सम्पुअ
काव्य विद्विगम मा होहि बिलमा

इसमें यह भी जाहिर होता है कि युगमें चित्त या मनका सम्बन्ध है। इसलिये कहा गया है— मन एव मनुष्याणाम् कारणं बन्धनोऽश्रयोः। इस प्रकारकी मुख्य साधनाके लिए काय माधना अर्थात् है और काय माधनाके लिए नाड़ी पीठ। इसलिये भी काल कथक तन्त्र ने कहा है —

बाया भाये न मिद्विगम परम मुर्ध प्राप्यै जग्मनि और तन्मात् कार्याय हेतोः प्रविद्विगम समये भावयेन नाड़ी योय काय सिद्धयसिद्धि स्त्री धुन

गीतगुणके बाह्य सुवर्णमय रूपने लक्षके सम्मनहुमात्की पीठपर रत्न लगी सन्तरण करते हैं, यह बड़ा कारुणिक वर्णन है। यह वर्णनके काशीनाथ महामात्यमें भी देखनेमें आता है, तथा परमर्षी कवि रामानाथ धम्मने इसीके आश्रयपर एक लम्बी कविता लिखी है।

इस प्रकार हम लीय देखते हैं कि इसमें उड़ोवाकी किंवदन्तियाँ देव-देवियाँ गरी-गङ्गाई ठीक भूमिका सामाजिक रोचि-रिवाज धर्म-सम्प्रदाय सभी सम्बन्धित हैं। नाम बहज्जर अन्य नामोंसे उस वास्तव्य इतिहास भी इसमें किंचिद्वैद है। सब कहा जाए तो यह एक विशाल ज्ञातीय ग्रन्थ है। यह काल इतिहास और पुराणका पय वा इस युगकी मुख्य प्रवृत्ति ऐतिहासिक या पौराणिक थी। इसी युगमें उड़िया साहित्यका बलिष्ठ उत्प्रेक्ष हुआ था।

उड़िया साहित्यका यह उत्प्रेक्ष सिर्फ संस्कृत साहित्य या पुराणोंके आश्रयपर नहीं हुआ बल्कि इस कालमें मौलिक रचनाएँ भी हुईं 'अर सुबानिधि की उच्छ और भी मौलिक रचनाएँ हुई थीं। मार्कण्डेयासकी केशवकी इसी प्रकारकी एक रचना है। यह भी चौरीयाके कालमें लिखी गई है केचिन् इसमें कोइल (कोइल) को सम्बोधन किया गया है। इसमें श्रीकृष्णके मरुप जानेके बाह्य पुत्र विरहित यशोदा कोइलकी सम्बोधित कर अपनी मानसिक व्यथा व्यक्त करती है। यह वास्तव्य रचना एक अनूपम आश्चर्यात्म्य है। इसकी भाषा अत्यन्त सरल और भाव बड़े ही ममस्पर्शी है।

यह उड़िया साहित्यका प्रथम कोइल आश्चर्यात्म्य है। इसके बाद उड़िया साहित्य कोइल साहित्यसे अत्यन्त समृद्ध हुआ और पञ्चसखाओंके बलराम दासने 'बारमासी कोइल', प्रकर दासने 'कान्त कोइल' नाथ दासने 'जातीय कोइल' तथा कुसुमने 'संभङ्गी कोइलियाँ' लिखीं। पञ्चसखाओंके अगलावदासने इनपर एक 'वर्ष कोइल' लिखी जिसमें इसका पटीर तत्त्व परक वर्ण किया गया है।

इसका दूसरा ग्रन्थ महाभाष्य है। यह अत्यन्त अत्यन्त प्रशिष्ट है। यह एक तत्व परक ग्रन्थ है। इसमें भिन्न-वार्धती सम्बाह है। और भी रामचन्द्रजीके ध्यानसे आनन्दमय इसका प्रतिपाद्य विषय है।

तत्व परक ग्रन्थोंको छोड़कर इस युगमें काव्य ग्रन्थ भी लिखे गए। इसी युगमें अर्जुनदासने 'राम-विधा' (राम-विवाह) नामक एक काव्य लिखा था ये सारला दासके परमर्षी थे। 'राम-विधा' के शक्ति सुधीव और इगुमानके जन्म वृत्तान्त सागला दासके अनुसार दिए गए हैं।

यह ग्रन्थ बारह छन्दों (मयों) में लिखा गया है और विभिन्न छन्दोंमें विभिन्न पद्य-पाणिनिबोध व्यञ्जहार किया गया है। इसमें विरचामित्रके निमग्नपक्ष से लेकर परमुराम धर्म-दत्तन तक राजपरिष्ठ बलिष्ठ है। इसकी भाषा प्राचीन-शील लफटी है। उल्लेख मञ्जु उनके पितामह अन्तर्ग्रन्थ मञ्जु और उनके पूर्ववर्ती कवि

प्रताप राम कार्तिकदास प्रभृतिने 'राम विद्या' का उल्लेख किया है। इसी युगका और एक काव्य है उपाधिकाय। इसके रचयिता शिखुर्षकर बास है। इनका समय निश्चित रूपसे निर्धारित नहीं है किन्तु प्रतापराम कार्तिकदास धनञ्जय भण्ड्य प्रभृतिमेंने इनके उपाधिकाय का उल्लेख किया है। इसमें बाबासुरकी कन्या उपा और प्रद्युम्नके पुत्र मनिबद्धका विवाह बगित है। इसमें सारलाबासके महाभारतमें बर्णित 'उपा-हरण' का प्रभाव परिष्कृत होता है। उपाका पिता बाबासुर सठस्र पुत्र था और शोभितपुरका राजा था। सारलाबासके अनुसार शीणितपुर बेंतरिजीके उपर था। इसमें शृंगार रस प्रधान है और कहीं-कहीं कठन और और रसके छोटें भी दिखाई पड़ते हैं।

इस युगकी और एक विशेषता है कि इस कालमें संस्कृतक काव्य ग्रन्थोंसे उड़ियामें अनुबाद भी प्रस्तुत किया गया है। कवि बरणीबर्ने भयदेवक 'गीत-पौकिन्द' का उड़ियामें पद्यानुबाद किया है। अनुबादकी भाषा सरल और भाव प्रकाशनमें समर्थ है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इस युगमें उड़िया साहित्यका विभिन्न दिशाओंमें विकास हुआ।

मध्य-युग

मध्य युगका दो भागोंमें विभाजन किया गया है—पूर्व मध्य युग और उत्तर मध्य-युग।

(क) पूर्व मध्य युग पूर्व मध्ययुगको भक्ति युग भी कहा जा सकता है किन्तु यह भक्ति उपाधिकाय नहीं ज्ञान विद्या है प्रेम प्रधान नहीं वीर प्रधान है। इसमें काम साधना और पिण्ड-ब्रह्माण्ड तत्त्व प्रधान है। हम आदि कालके प्रसिद्धि वाले ठो उसमें प्रधानतया तीन धाराएँ नजर आतीं—धर्म धारा पुराण धारा और काव्य धारा। धर्म धारामें बौद्ध धर्म और बौद्धा की शून्य साधना जाती है। धर्म धारामें ही —

देरबमि बहु बिहू सखई झून
बिज बिहुमे दाप न पुष
बिज सहुजे झुन सधुगुआ
काम्य विमोरा धा हीहि बिलभा

इसमें यह भी बाहर होता है कि शून्यसे बिल या मनका सम्बन्ध है। इसलिए कहा गया है— मन एव मनुष्याणाम् चारणं बन्धमोक्षयो। इस प्रकारकी शून्य साधनाके लिए काम साधना अपेक्षित है और काम साधनाके लिए ताड़ी यौग। इसलिए श्री काक चक्र उग्र ने कहा है —

काया भावे न मिदिर्नच परम मुक्तं प्राप्यते जन्मनि और तस्मात् कार्यापि हेतो प्रतिबिन् समये भावयेन ताड़ी योमं काय सिद्धम्पसिद्धि स्त्री भुवन

निष्पन्न विकारत्वं प्रयाति। अपत्स्विकार्यं न होनेसे इस जन्ममें व सिद्धि, न परम सु-
 मिच्छा है। अतः काय सिद्धिके लिए प्रतिदिन समयके अनुसार नाड़ी योग
 सम्भवात् करना चाहिए। त्रिभुवनका निम्न काय सिद्ध होनेसे अल्प सिद्धियाँ वासियाँ ह-
 याती हैं। इसमें कायकी त्रिभुवन निष्पन्न कहा गया है। इसीमें पिण्ड-ब्रह्माण्ड उत्पन्न
 जीव है। इसकाय बोधा कोप न कहा है —

एतन्नु सै सुरसरि वसुधा एतन्नु सै वंशा साम्भ
 एतन्नु प्रजापतय वाराणसी एतन्नु सै अन्ध विभाकर

[इसीमें वह सुरसरि नया-वसुधा है इसीमें वंशा साम्भ है। इसीमें प्रजाप-
 वाराणसी है और इसीमें अन्ध-मूर्ख है।]

श्री काल अत्र उत्पन्ने उपर्युक्त पल्लोकमें और एक उक्त्य करनेकी बात है—
 'प्रतिदिन समये। प्रतिदिनका समय क्या है? मेथिलीकारण समयका अर्थ दिया है—
 आचार, सिद्धान्त विभाकार इत्यादि। मोरखनाके नामसे प्रचलित सप्तांग योग
 कारण का सम्भवतः इसीके साथ सम्बन्ध है। इस साम्भनाके अनुसार सातघाटीमें
 विभिन्न स्वर साधनाकी विधि है।

नाथ पन्थमें यही परम्परा बली जाती है; इसमें भी नाड़ीयोगकी साधना
 बजाई गई है और पिण्ड-ब्रह्माण्ड उत्पत्तिका उल्लेख है। सिद्धो और नाथोंका
 साधना मार्ग कटीक-कटीक एक है; अन्तर है उपास्य देवताओंमें। सिद्धोंके अनुसार—
 पवित्र सजस सरस वस्त्राण्ड
 देहिं बुद्ध वसन्त न भाव्य

[पवित्र सजस सास्त्र व्याख्यान करता है किन्तु देहमें बुद्ध बास करते हैं यह
 मही जानता।]

अर्थात् देह स्विकृत बुद्ध ही उपास्य है। नाथोंके अनुसार बुद्धके स्नानपर
 सिद्ध आ गए। और भी बौद्धोंके महा समान मानमें बुद्धकी बुनत मूर्तिही कल्पना की
 गई थी। उसके स्नानमें शिव-पार्वती आ गई किन्तु इनमें सबसे अद्भुत राधाइप्पकी
 युगल मूर्ति हुई। इसीलिए उड़िया साहित्यके पूर्व मध्य युग वा मथिल कालमें ललाट चक्रमें
 राधाइप्पकी युगल मूर्तिके ही साक्षात्कारका उल्लेख मिच्छा है और घटीको निरव
 बोद्धोक्त निरवराज स्वक इत्यादि कहा गया है। या महा घटामुख उत्तरीय वैष्णवोंके
 मनमें मूख्य पुरीके अदम्भाय और राधाइप्पकी युगल मूर्ति एक और अमिन्न है।
 साधना मार्ग किन्तु बही रहा। साधना है काय साधना और योग है नाड़ी योग।

उड़िया साहित्यके इस पूर्व मध्य युगको परब्रह्मणा युग भी कहा जाता है।
 परब्रह्म लब्धा है—बलरामदास अगलाधरास,अनन्तरास यशोदत्ताम और अच्युता-
 नन्ददास। इसी समय र्चन्यदेव उड़ीसा आए थे और उड़ीसाके इस पाँच महापुरोंके
 साथ नव्य स्थापन किया वा विनय इनका परब्रह्मणया नाम पड़ गया। वे पहलेसे
 परब्रह्मणया थे भी। अच्युतानन्दकी शून्य संज्ञिता में इनके सिध परब्रह्मणया और

पञ्चरात्रा योनों नाम जाते हैं। पञ्चमत्खा या सम्प्रदायोंके मुख्य वे भी। इनकी पाँच यादियाँ थीं और उनमें बलराम समतारक मन्त्रके जयन्ताबदास पोद्दा नाम या बलीस अक्षर मन्त्रके यशोवन्तवास इयाम पञ्चाक्षर मन्त्रक अनन्त दास एनाक्षर मन्त्रक और अम्पुतानन्ददास अनाक्षर मन्त्रके उपासक थे। इससे यह पता चलता है कि वे समन्वयवादी थे।

पञ्चमत्खाओंमें प्रत्येकने मन्त्र लिखे थे। पहला कहा गया है कि यदि कामसे तीन धाराएँ बनी जाती थी—धर्म-धारा पुरुष धारा और काम्य धारा।

बलरामदास : उनका जन्म-काल करीब ई सन् १४७२ था। वे पञ्चसखाओंमें श्रेष्ठ थे। उनके पिताका नाम सोमनाथ महाारात्र और माताका नाम जम्बुवती या यमुना था। वे ज्ञान मिथ्य या योग मिथ्य चर्चितके साक्षर थे। उनकी मस्ती देखकर श्री चैतन्य देव उनको मत बलराम कहा करते थे। इसलिये वे मत बलराम के नामसे प्रसिद्ध हैं। सिद्धिसे सम्बन्धित उनकी अतीन्द्रिय चर्चितकी अनेक घटनाएँ प्रचलित हैं।

उनका शक्ति रामायण उड़ीसामें अत्यन्त प्रसिद्ध है। मारकादामन महाभारतके समान शक्ति ब्रूत लिखा गया था। इसलिये इसका नाम 'शक्ति रामायण' पड़ गया। किन्तु मुद्रित पुस्तकमें इसको भी जगुईभाजरी ब्रूतमें परिवर्तित कर दिया गया है। इसका असली नाम 'जयमोहन रामायण' है क्योंकि जयमोहन अर्थात् जयन्ताब जीकी आज्ञासे यह रामायण लिखी गई थी। मास्सा महाभारतकी तरह यह भी बाल्मीकि रामायणका ठीक-ठीक अनुवाद नहीं है। अथ्य श्रुत चरित परजुगाम चरित आदिमें अक्षर तो है ही उनके अतिरिक्त उड़ीसाका औरव अक्षरोंके लिये भी कई प्रबंध जाते हैं जैसे महादेवका नाम स्थान ईसास उड़ीसाका चरितनाम ही है। राजने उड़ीसाके बिरजाक्षेत्र (पाजपुर) में तपस्वाकर शिवजीमें वर प्राप्त किया था वानर सेनापतिमोका जन्म-स्थान उड़ीसाके कोर्बाई क्षेत्रभितर, ब्याई बामण्डा इत्यादिको बताया गया है। इसमें उड़ीसाका जातीय और सामाजिक जीवन पूर्णरूपमें प्रतिबिम्बित हुआ है। सीता भी उड़ीसाकी बहू-सी समती है। यह अन्य पुराण साहित्यकी धारामें माना है।

उन्होंने योग और छत्र परक ग्रन्थ भी अनेक लिखे हैं। इनमें बेरान्तमार, ब्रह्माण्ड सूक्त दीप्तिमार मिट्टान्नाइम्बर, अर्जुनगीता अमरकोष गीता गुप्त गीता आदि प्रमुख हैं। गुप्त गीताक केवल आठ ही अध्याय उन्होंने लिखे थे। उनका शेष अथ एक ब्रूत बलरामशाम से पूर्ण किया।

उनके वाक्योंमें बटबबकास पञ्चसखीरी भाव समुद्र आदि प्रधान हैं। 'भाव समुद्र'मन्त्र पाठ्यवा एक अपूर्व ग्रन्थ है। गुरुदेव या ग्य याकारके समय बलराम दासने मन्त्री कोष ग्यके ऊपर चरनेकी चेष्टा की तो राजाकी आज्ञामें पण्डितों ने उन्हें बचना देकर निवास दिया। इस अपमानमें बठकर वे बाँकी मुहाण चल गए और वहीं

एक बाहूके तीन रथ बना ठाकुरोंको बैठकर जयलालजीको नौसने एवं निर्या
 कर्त्तै लये । इधर रथ नहीं चला । जयलालजीके अश्वेरास जब प्रथपति मङ्गल
 स्वयं जाकर उनको लाए तो रथ चला । इस स्तुतिमें इतना बर्ष इतना अभिमान
 है कि एक सन्ना प्रकृत हो इसे लिख सकटा है । इसमें रामकृष्ण और जगन्नाथ
 सब एक ही गए हैं । इसकी भाषा भी बर्बगयी और कर्म भी अत्यन्त अनुकूल है ।

इसके कुछ पर बेनेका लोम लम्हाला नहीं जाता —

हरि हो—बातिरे बिरथ करिछि नुहिं ।

सग्रीवे बिजय कर भीसाई ॥

नाथ तु तारवि बने से बाड ।

रबी बोबाइ येने तेने दाड ॥

हरि हो—हातके बाग बार हुंसे बाड ।

बास बलरामर तु हि आण्ट ॥१४॥

हरि हो—से जने येने बुद्धि परिबानु ।

बलिमार बु ब कि पा बैलानु ॥१५॥

हरि हो—राधा लक्ष्मणे कन्नु निघन प्रीती ।

बोपरे रचिअ उचन्वत्त कीति ॥

नाथ ती रस कन्दबुध लीला ।

अन्रसेवाते गीबोपुं मिलिना ॥

हरि हो—पण्ड्य घरि ती छेजन्ता गिर ।

बलराम दास हुंसे कर्त्तर ॥१६॥

हरि हो—साज बंकोब इय तोर नाहिं ।

सोसाकु रावण नेला बोरार ॥

नापसे बुरा कैमले आभिनु ।

तानु बेनि पुषि घर कु गलु ॥

हरि हो—से कबाकु साज नोहिला तोर ।

बलिमा शत कु करिनु बार ॥१७॥

हरि हो—बपत्तीरि हरि पापान हेनु ।

शिला प्रालप्राम नाथ बहिल ॥

नाथ तु बोपरे कन्नु जनीति ।

बज लीरि संये रने पीरिति ॥

हरि हो—सैहि वापव हेनु वाप कन ।

बलरामदास कु कक नीप्य ॥१८॥

इसमें इस प्रकारके ७४८ पर हैं। उनके भित्तिचित्र उन्हींमें कई बरतियाएँ और बीरुमिया लिखी हैं। उनका श्रीमद्भगवद्गीताका उद्घोषार्थ एक पद्यानुवाद भी मिलता है।

जगन्नाथदास परम्पराकारोंमें द्वितीय महा जयशानदास हैं। उनका जन्मकाल करीब ई मन् १४९ है। उनके पिता पुरीके निष्ठ कनिष्कपुर नामके पुराण पंडा थे। पिताका नाम जयशानदास था और माताका नाम यशोवती। वे ब्राह्मण ब्रह्मचारी थे और आठ छात्रकी उच्चम पुत्री मन्दिरके बगलमेंके पास भागवतकी प्राञ्जल व्याख्या करते थे। कहा जाता है कि १८ वर्षकी उम्रमें बहरामदास उन्होंने शिष्या ली थी और ६० सालकी उम्रमें उनका निरोध हुआ। श्री श्रीनन्द देव उनकी शैलीके शक्ति रखकर उनका प्रतिबद्ध करने लगे। इसलिए उनकी प्रतिबद्ध उपाधि हो गई और उनका सम्प्रदाय शक्तिबद्ध सम्प्रदायक नामसे प्रसिद्ध है।

उनकी हस्तियोंमें महाभ प्रसिद्ध श्रीमद्भगवद्गीता मुहूर्तों या नवाशरा जन्म मरकत मुगधुर और मुक्तीन पद्यानुवाद हैं। यह दुर्लभ कारित्र हुआ कि इस मूल का नाम भागवत पड़ गया। द्वितीय प्राणोंमें रामायणके ममात या उगमे अत्रिक यह उद्गीर्णार्थ प्रचलित है। इस पद्यानुवादके फलस्वरूप उद्गीर्णार्थ कीर्तन-शक्ति भागवत मुनी और जगन्नाथ भागवत गारी पारि जाता है। यात्र भी मृग्य शब्दोंके पास हरिनाम और भागवतका मन् अनुवाद सुनाया जाता है। इस भागवतका भी एकान्त स्वरूप अत्रिक प्रचलित है और कहीं-कहीं भागवतक नामसे जन्म स्वरूप ही समझा जाता है। जगन्नाथनाम एकादन स्वरूप एक अनुवाद भी किया था। इसमें भी मूल भागवतमें जोड़ा बहुत अलग पड़ जाता है। इत्यादि स्वरूप और जयोदश स्वरूप जोड़कर महादशनामने इसकी पूरा किया था।

उनके तत्काल परक हस्तियोंमें वादबद्ध यात्रा मुगध भागवत 'गुणाभित्ता' 'मन गिला' अर्थ जोड़नी इत्यादि प्रसिद्ध हैं। इनमें भी बहो काय-नायना ज्ञान-मिया मक्ति जयशानदास माहात्म्य निष्ठ-ब्रह्मचारी एकत्व आदि प्रतिपादित हुए हैं। इनके अनेक मन्त्र ग्रन्थ भी प्राप्त हैं जिनमें हृत् मक्ति कल्पना हृत्प्रमदित कल्पनाकृत निम्न मुगध पीठा जयशानदास अत्रिनाम्बोधि मार्गी आदि प्रसिद्ध हैं।

उनके शब्दोंमें दक्षिण बाह्य हृत्पीठ यत्र मुनि मुपुनी मुने प्रुभमुनि आदि कई छाटी रखताएँ हैं। वे महा भक्तिपरक हैं और कुछमें शार्ङ्गकी मुगध प्रदान हैं।

पद्योक्तवाच्य भाषका जन्म ई सन् १४९१-१४९३ में मोड़वण हुआ था। उनके पिता का नाम बसुमल्लिक (बसुभ्राय मल्लिक) और माताका नाम रेखादेई था। १२ साल की उमरमें घर छोड़कर उन्होंने भारतके अनेक तीर्थोंका घूमन किया और अन्तमें पुष्टि प्राप्ति। प्रभाव है कि उन्होंने वैतन्य देवसे बोधा भी किन्तु वे बुद्धवचन का जीवन मापन करते थे। उन्होंने बनीवार रजुरामकी भगिनी अन्नवना देवीसे धारी की थी। उनका कोई पुत्रप नही मिलता। सामना परक धर्मोमें स्वरोच्य केस का विषय स्वरोच्य नामसे उक्तिमाने पद्यानुवाह मिलता है। उसीसे उनकी और उस मृगशी धार्मिक प्रकृति स्पष्ट हो जाती है। उन्होने प्रेमनक्ति ब्रह्म पीठा लिखी थी जिसमें स्वर सावनासे समाधि नाम और समाधि अन्नवनासे राधाकृष्णके नित्यरासका बर्णन विस्तृत पर किया गया है। उन्होंने रास पण्डितका और अभिप्य पुत्रक मालिका आदि कई मालिकाएँ भी लिखी हैं। लेकिन उनकी सबसे प्रसिद्ध कृति गोविन्द चन्द्र गीता है। यह उड़ीसामें मर्यत बनप्रिय है और नाथ योगी ज्योप केसरा (राजन हुर्या) के साथ गा-गाकर विसादन करते हैं। उनके कुछ मन्त्र (निर्गुण मन्त्र) भी प्राप्त हैं।

अन्नवनास उनका जन्म काल करीब ई सन् १४९२ था। वे विष्णु जन्म के नामसे प्रसिद्ध हैं। उनके पिता कविन और माता बौरी थी। वे मुयंके उपासक थे। प्रभाव है कि नूर्म देवताने उनको नूर्ममाद्ययन एकाक्षर मन्त्र दिया था और एक हथार बसोदकी सिखा दी थी। नूर्मके उपदेशानुसार उन्होंने वैतन्यदेव और नित्यानन्दसे सामान्यार किया और नित्यानन्द मोस्वासीसे सीधा भी पी। वे योगमिथा कलिकर साधक थे। उनके बहुत कम ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं। उन्होंने कई मन्त्र भीठिया स्तोत्र पदक वाक्यन सवाह पदक जन्म सवाह आगत बुम्बक मालिका उपदेशावर ठीकसाधर (बाबरमालिका या भविष्यवाणी) और हेतु उद्यम भाषावत एक बड़ा ग्रन्थ लिखा था। हेतु उद्यम भाषावत में अन्नवना जन्म मोरन्य योग तत्व मायमी तत्व राधाकृष्ण तत्व आदि वर्णित हैं। इसमें भी सध्या माया का प्रयोग किया गया है।

अन्नवनास उन्के जन्मकालके विषयमें बहुत मतभेद हैं। किन्तुकि मन्म ई सन् १३ ई. फिर्नोके पद्यमें १४९० और हुसरोके मन्म ई १४८३ है। उनके पिता दीनबन्धु पुष्टिका थे और माता पद्मवती थी। उनका जन्म तिमरुवा नामसे हुआ था और उनकी माता नाम भी कटक जिलेके मेम्बाल म विद्यमान है। उनके दोसा नूर्मके बारेमें भी मतभेद देखा जाता है। फिर्नो नित्यानन्द और हुसरो समानन बताते हैं।

पञ्चसखाओंमें इनकी रचना सबसे खनिज पाई जाती है। मयाकार

संहिता में कहा गया है कि —

कृतिषु संहिता अठसतरी गीता बंधानु सप्तविधरे।

उप बंधानु द्वावन्न जप्य वेदि मविष्य इत जप्यरे ॥

पद्य पद्यावली ललोक ये गन्ध तद्गु श्रीकृष्ण महिमा।

तो जाये कहिले बरबकुमार बह्य सारस्वत सीमा ॥

अर्थात् उन्होंने ३६ संहिताएँ, ७८ गीताएँ, २७ बंधानुचरितके साथ हरिवंश १२ उपबंधानुचरित २ मविष्य मामिकाएँ और एक लाख पद्य-पद्य आदि (जिससे कौशिक चौथीसा टीका विनाम भोगाल मुञ्जरो निर्णय भजन आदि सामिल है) लिखे थे।

उनके अनेक ग्रन्थ प्रकाशित हैं। उनके अनेक प्रकाशित-अप्रकाशित ग्रन्थोंमें 'अथा संहिता' 'अपठि संहिता' 'अथाइ संहिता' 'मन्त्र संहिता' 'यन्त्र संहिता' 'तत्र संहिता' 'अनाहुत संहिता' 'मकमित्त महिमा' आदि प्रमुख हैं। प्रकाशित ग्रन्थोंमें पुराणोंमें सात खण्डोंवाला हरिवंश प्रधान है। यह संस्कृत हरिवंशका अधिकतम अनुबाद नहीं है इसमें नामतत्त्व निराकार तत्त्व योगतत्त्व सप्त पञ्चात्मिक प्रच्छिन्न आदिका व्याख्यान किया गया है। इसमें योगान्त वेदान्त सिद्धांत नामान्त आदि सम्प्रदायों तथा विभिन्न मठोंका उल्लेख भी पाया जाता है। यह एक अत्यन्त उपारेय ग्रन्थ है। इसमें अभ्युत्तानन्वयास लिखत है —

“हिन्दु भावे अलेख तुल्य अलेख ये।

एषु अलेख तेहि अलेख हिन्दु भजे” ॥

यहाँ कबीरका बचन याद आता है —

हिन्दु भजे अलेख तुल्य भजे अलेख ।

इसके अलावा बह्य अष्टमि अष्टावार संहिता परइ संहिता अ्यासीम पटल आदि अनेक ग्रन्थ हैं।

उनकी और एक प्रसिद्ध कृति है सोपानक भोगाल ओ छरङ्गिषेठ (सोपानों का आगौटना और काठी खेळ)। भोगालमें मुदामाका प्रश्न और श्रीरामाका उत्तर है।

इसी कालमें जीवनी साहित्यका प्रारम्भ हुआ। विवाकरदासने पद्यमें जगन्नाथ चरितामुद्र लिखा जिसमें पञ्चसखाओंके एक अतिबड़ जगन्नाथ दास की जीवनी दी गई है। इनमें ज्ञानमिथ्या भक्ति या उत्कलीय वैष्णव धर्म प्रतिपादित किया गया है। विभिन्न सम्प्रदायों और शाखाओंके साथ वैतन्व्यदेव की जीवनी और गौड़ीय सम्प्रदायके अग्य वैष्णवोंके जीवनकी एक झलक मिलती है। विवाकरदास ई. सन्की पोडस पताथीके प्रबन्धोंके हैं। सत्रहवीं शताब्दीके प्रारम्भमें ईश्वरदासने पद्यमें घाणवत लिखा था।

पञ्चसखाओंकी पम्परामें विष्णुगर्भ पुराण के रचयिता वैतम्पदास
अथाकार संहिता के रचयिता नन्ददास सुधारसार पीठा के रचयिता
अन्नमभिरास परमे पीठा के रचयिता द्वारिकादास प्रमुख हैं। वैतम्पदासने निर्गुण
माहात्म्य भी लिखा था। वे अड़िमाऊके बड़भूक ग्रामके निवासी थे। द्वारिकादासने
अपस्नापदासकी भागवतकी भी पूर्ण लिखा था। परमे पीठा योग उरवका एक
प्रकृत प्रथम हैं। उन्होंने परमे कृष्णमणि गिरि पुराण भावि भी लिखा था।

इस युगमें और भी अनेक पुराण लिखे गए थे। महादेवदासने इसी कालमें
'मार्कण्डेय पुराण' 'विष्णुकेवरी पुराण' 'पद्म पुराण' 'औसात्रि महोदय' 'इतिहास
पुराण' 'आर्तिक पुराण' 'मान पुराण' 'आपन्न पुराण' 'आर्यी माहात्म्य' आदि
लिखे थे। ये पुराणोंके ठीक-ठीक पद्यानुवाद नहीं बल्कि पौराणिक आख्यायिकाओंपर
आधारित पुराण हैं। किन्नर लयाधिकार 'विचित्र हरिचर्य' भी इसी कालका है। 'विचित्र'
का अन्विष्टाव है कि यह विभिन्न कर्मोंमें लिखा गया है और मोपकीला पात्राके
अहंकारसे लिखित होनेके कारण कुछ यद्यमें संशय भी आ गए हैं। कुरुक्षेत्रदासने
अध्यात्म 'गणायम' का पद्यानुवाद भी किया था। पीठगोविन्द का 'रस वाग्नि'
नामसे कृष्णानन्ददासका और एक पद्यानुवाद भी मिलता है। इस कालमें ब्रज
साहित्यमें साकबेग प्रचिन्ने हैं। वे मुसलमान थे किन्तु वे वे कृष्ण भक्त। उन्होंने
अनेक रसात्मक प्रसिद्ध गान लिखे हैं।

यहाँ एक बात और ध्यानमें रखनी चाहिए। पञ्चसखाओंके समय वैतम्प—
देव उड़ीसामें आकर पुरीमें बहुत दिन तक रहे। पञ्चसखाओंने अपना वैशिष्ट्य
रखते हुए भी वैतम्प देवकी महिमा स्वीकार कर लिया। सामिक सम्प्रदायोंकी गति और
साहित्यपर इसका अत्यन्त प्रभाव पड़ा जिससे किन्तने ही प्रेम भक्तिके उपासक हो
गए। योशबरी नदीके तटपर रायचामानन्द और वैतम्पदेवका मिलन और समाप
ऐतिहासिक है। रायचामानन्द गुप्त भक्तिके उपासक थे। उन्होंने ब्रजबुक्ति में कुछ
पदावली लिखी है। ब्रजबुक्ति उन दिनोंके प्रेममार्गी ईश्वर पर कर्ताओंकी
भाषा ही नहीं था सचती है। इसलिये उड़ीसामें भी ब्रजबुक्ति में लिखी ही
पदावली पाई जाती है। रायचामानन्द भी उसी प्रकारके कवि हैं। उनके बंसक
आज भी पुरी निकले खोर्जा बरकतने रचने हैं। गिरी महाशक्तिकी बहुत
माधवी शक्ती भी इसी प्रकारकी कविता है। उनके अनेक पर बंधीय ईश्वर
पदावलीमें पाये जाते हैं। उनके कई उक्तिया पर भी पाये गए हैं। ब्रजबुक्ति की
परम्पराय सामाज्यरचयिता राय चार आदि कवि आते हैं।

मिर्क ब्रजबुक्ति ही नहीं गुप्त उक्तियाम भी कुछ भक्त कवि हुए थे।
दीनबन्धुनामक छान्द चार प्रभा और राधाकृष्ण मीमांसुत भक्तिसे
आत्माकित हैं। रामचन्द्रकने भी इसी परम्परामें महाभुक्त्य बंधीचौरी
आदि लिखी थी।

यह ठो बर्न-बाराकी प्रवृत्ति हुई। यदि युगके बहूत शास्त्री रामबिमा काव्य-क्षार बरी नहीं थी। इस युगमें काव्यका भी विकास कम नहीं हुआ था। समयके काव्य दो प्रकारके पाये जाते हैं—एक पौराणिक कथाबन्धुपर आधारित और दूसरा सौन्दर्य या काव्यनिक कथाबन्धु पर।

विमूर्तकरदानका उपाधिकार्य कपिलेश्वरदासकी कपटकेलि हरि-सकी चन्द्रावती बिसाम काठिकदानकी इतिमयी विभा यदि कई पौराणिक काव्य हैं। 'उपाधिकार्य' काव्यमें उपा-अनिवृत्तका प्रेम-परिणय बर्णन है। उनकी 'ज्योतिष' नामिकाके बर्णनका प्रभाव उद्योगश्रमपर भी पड़ा है। 'कपटकेलि' का पय है—राजाका मान बर्धन करनेके लिए भीहृषिकेश मारी वेन-शरण या कपट एमें केलि। इस काव्यके प्रत्येक छन्द (मम) के प्रारम्भमें गाथा भी गई है। चन्द्रावती बिसाम में दुर्योधनकी पुत्री चन्द्रावती और भीहृषिकेशके पुत्र याम्यका मूल कथ और विवाह बर्णित है। इसमें परवर्ती छन्दमें बर्णित विपयकी सूचना पूर्ववर्ती छन्दमें ही गई है। इतिमयी विभा (विवाह) के नाममें ही इसकी कथा-बन्धु स्पष्ट है। विद्युत्पाक बध इसका उन्मोचन है। उनका एक दूसरा काव्य मिश्रता 'नवानुत्पन्न' विषय है राजा-कृष्णका प्रथम मिलन।

सौन्दर्य या काव्यनिक कथाबन्धुपर आधारित काव्योंमें प्रतापरामकी सविसेमा रामचन्द्र पटनामिककी हारावती धीशरदासकी काव्यचन्द्रता बुवाव हरिचन्द्रनकी लकावती यदि प्रधान हैं। इतिमेषा का आधार एक लोक कथा है। इसका नायक मन्त्रीपुत्र बहिमाविकय और नायिका राजपुत्री इतिमेषा है। विद्यालयमें हूँ उनका प्रेम शुरू हुआ था और अनेक विपत्तियाँ झेलकर अन्तमें उनका मिलन हुआ था। हारावती काव्यनिक कथाबन्धु पर आधारित और धूमर रस प्रधान है। इसका नायक राजपुत्र नहीं है। यह एक साधारण लुब्धक है। और नायिका इतिमेषा बंगकी नहीं बल्कि एक गुड़ियागी (मिठाई बनानेवाली)की लड़की है। यही इसका एक प्रधान बर्णित है। 'काव्यचन्द्रता' एक काव्यनिक काव्य है। लीलावती की कथाबन्धु तो काव्यनिक है ही साव-साव ही उममें सवीतक ठाकुर्य का भी प्रयाग दिया गया है। रजुताव हरिचन्द्रन एक अच्छे मगीनत्र वे।

(ख) उत्तर मध्य युग

उत्तर मध्य युगको रीति काल भी कहा जा सकता है। यज्ञि कालके बाद रीति काल आता है। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि इसमें यज्ञि कालकी प्रम-बारा बिलगुल कर गई। आदिमिया और यज्ञ-यज्ञि अथवा उत्कलीय और सौंदर्य दोनों धाराएं चलती रहीं। अथवा ही प्रेमयज्ञिकी धारा प्रबल होने लगी। ऐसा होता स्वाभाविक भी था। किन्तु पृथमध्य युगके अन्तिम कालमें रीति कालका सूत्रपाठ हो गया था। इस रीति कालका हिन्दूक रीति कालम बहुत सादृश्य

है। इस कालमें पौराणिक और काव्यनिक दोनों प्रकारके काव्य पाये जाते हैं। इस युगके सभी काव्योंमें कथावस्तु और नायक-नायिका एक-ही हैं। सबमें जाकस्मिक वर्णन मिलन विरह अनुचिन्तन एवं पुनर्मिलन वर्णित हैं। नायिकाएँ निमित्त मात्र हैं। वर्णन प्रधान है। नायिकाओंकी वैशिवोंका उदा और सीता तक का मख-छाव वर्णन किया गया है। भूमार उसका बाहुस्य है। 'कहीं-कहीं' शृंगार अस्वीस भी हो गया है। सब प्रकारके शब्दात्मकारोंका और निकट शब्दोंका संश्लेष प्रयोग किया गया है। कोप शब्द लक्षण शब्द साहित्य शास्त्र काम शास्त्र और अम्याय्य शास्त्रोंकी साहित्य सर्वनामें सहायता ली गई है। नायक-नायिका लक्षण शब्दोंका कहना ही गया। उनेत्र मञ्जने इतकी परकाष्ठा तक पहुँचा दिया। इसलिए इस कालका नाम ही मञ्जकाल पड़ गया। वस्तुतः यह काल उनके पहुँचने ही शुरू हो गया था।

समञ्जस मञ्ज (ई १९३७ से १७०१) समञ्जस मञ्ज उनेत्र मञ्जके पितामह थे। वे बृमसरके राजा थे। उन्होंने रामायण पर आधारित 'रघुनाम विकास' और काव्यनिक कथावस्तुपर आधारित 'त्रिपुरसुन्दरी' 'मदन मञ्जरी' 'रत्न-मञ्जरी' 'अनङ्ग रेखा' 'इच्छावती' आदि काव्य लिखे थे। उनपर 'रीति काव्यकी छाप स्पष्ट है। उनके 'रत्न परीक्षा' 'मदन परीक्षा' और 'गज परीक्षा' ये तीन कथा शब्द और चौपड़ी भूषण आदि सगीत शब्द भी उपलब्ध हैं। उनेत्र मञ्जपर उनका प्रभाव स्पष्ट है। कहा जाता है कि 'रघुनाम विकास' को टक्करमें 'वैदेहीश विकास' लिखा गया था।

वीलङ्कनदास के द्वितीय मुकुन्द शैव (१९५१-१९०९) तथा रिव्य सिंह शैव (१९२९-१७११) के समयमें जोषित थे। वे रोषि-कवि थे। उन्होंने शासनिक काव्यमें रोषिका और प्रथम उत्कलीन और चौड़ीय मठवालोंका समन्वय किया था। उन्होंने 'रत्न कस्तूर' काव्य लिखा था। जिसकी प्रत्येक पंक्तिका प्रथम अक्षर क है। यह राधाकृत्य परक एक अपूर्व काव्य है। 'क' शब्द नियमकी रक्षा करते हुए भी यह एक अत्यन्त ललित मधुर काव्य है। इसमें कविता उदात्त शक्तिपूर्ण स्पष्ट है। वे कविके बारेमें कहते हैं —

कविता करे मुलङ्क स्तुति
एविव बड़ नाई विपति

और कविताके बारेमें कहते हैं —

कवि होइ कवियव निर्मल कवित्व ।
कप शैव मुलुं विव रतिक कविजन ॥
किञ्चित करि आशवाद कविविद साहा ।
कहे कृष्ण कि मठरे सेविधि नुं एहा ॥

इसके अलावा इनकी 'रत्नमीता रसविनोद (तत्त्वपरक)' प्रस्ताव सिन्धु' (उपदेश परक) 'गावकेलि' अम्भारकैलि' और बात बाण चौतोषा आदि अनेक कृतियाँ पाई जाती हैं।

भूपति पण्डित के सारस्वत ब्राह्मण के मोर तिरहुत होकर दिव्य सिन्धुके समथमें उड़ीसा आये थे। वे श्रीतन्त्रशास्त्रसे मन्त्र सेकर उड़ीसी सम्प्रदायमें शोधित हुए थे। उड़ीसा अश्लील तरहसे सोबानर बंगमादेवासके भागवतके समान नवाझरी बृत्तमें 'प्रेमपंचामुष्ट' लिखा था जिसमें कृष्णकी लीला बर्णित है। यह भी उड़ीसामें अत्यन्त प्रचलित है। उनका भूपति चौतीसाके नामसे एक चौतीसा भी मिलता है।

बेब कुर्कन दास उनकी रहस्य मन्त्ररीपर ज्ञानमिमाकी अपेक्षा मन्त्र-मन्त्रिका प्रभाव अधिक है। उन्होंने अष्टरक कमल कैसर और महायोग पीठमें स्थित पदनाचजीकी स्तुति करते हुए भी गोपियों का और गोपियोंमें भी राजाका श्रेष्ठतम प्रतिपादित किया है। उनके मठमें गोपियोंके प्रसादसे ही प्रेम भक्ति मिलती है। इनका काल निर्दिष्ट नहीं है।

बुन्दावती दासी और उनका परिवार पूर्ण रूपसे गौड़ीय सम्प्रदायके अनुयायी था। उनके पति चन्द्रसेखरदासने १९९५ ई में कृष्ण तत्व चन्द्रोदय' पुत्र भीमदासने हरिप्रसन्न चन्द्रोदय और भक्ति रत्न माला और उनके पौत्र कृपासिंभूदासने १९९८ में उपासना चन्द्रोदय लिखा था। उन्होंने स्वयं पूर्वतम चन्द्रोदय लिखा था। इसमें श्रीकृष्ण द्वारिकामें पूर्ण मञ्जुरामें पूगतार और जन्ममें पूभठम प्रतिपादित किए गए हैं।

लोकनाथ विद्याधर के बाबपुरके अधिवासी थे। उन्होंने 'सर्वांग मुन्धरी' पद्मावती परिचय चित्रकला रसकला चित्रोत्पत्ता परिचय और 'बुन्दावत विहार लिखा था। बुन्दावत विहार एक पौराणिक काव्य है और उसमें कृष्ण भीला बर्णित है। बाकी सभी वास्तविक काव्य हैं। उनके वाक्योंमें इतने यमक अन्तर्लिपि बहिरलिपि तथा होमुत्रादि बन्धोंका समावेश है और जगत् रीति काव्यके सब लक्षण विद्यमान हैं। पद्मावती परिचय' ई १७ ५ में पूर्ण हुआ था।

त्रिदिक्रम भञ्ज उनकी कनककला भी इसी प्रकारका एक काव्य है। इसका रीति कालकी छाप स्पष्ट है। वे उदयभञ्जके भावा थे।

उदय भञ्ज के भी उपयुक्त पुष्ट भूमिमें पैदा हुए थे। उनका जन्म ई १६८५ में और मृत्यु ई १७२५ में हुई थी। वे भी भुमसर राज परिवारके थे और जनञ्जय के पौत्र थे। पहले कहा गया है कि पौत्रपर पितामहका सर्वोत्तम प्रभाव पड़ा था। शौनकपुत्रका भी उनपर प्रभाव कम न था। उनका प्रसिद्ध वैदिकीय ज्ञान काव्य जनञ्जय भञ्जके रघुनाथ बिलाम के टकरमें लिखा गया था। नाममें स्पष्ट है कि दोनोंके विषयबन्धु एक ही हैं। विन्धु नाम रखा गया रघुनाथ

विकास की बगह पर बीरेही जिज्ञास । नामके समान ही यह सारा काव्य
 व काव्यिक नियमसे लिखा गया है। हर एक पंक्तिमें आदिमें बकार आता
 है बीसा कि बीतकृष्णदासके रसकस्तोत्र में ककार से पंक्तियां शुरू होती हैं।
 सिर्फ इतना नहीं इसके प्रत्येक अक्षर (सर्ग) में आइत होतीस आदि
 बकारादि संख्याके पर भी आए हैं। उन्होंने रसकस्तोत्र के टक्करमें एक कडा
 कौतुक लिखा था जिसमें नामके समान आदि और अन्त दोनोंमें क है।

उनके अन्य पीठजिह काव्योंमें नुमशापरिचय वज नीला कुञ्ज
 बिहार रामलीलामृत अबतारसउरज्ज आदि मुख्य हैं। नुमशापरिचय में
 'स' काव्यिक नियमका पालन किया गया है। अबतारसउरज्ज सम्पूर्ण काव्यमें 'बता' या
 'ह' काव्यिक भाषा कोई नहीं है। उनके काव्यजिह काव्योंमें मुख्य है—'लावभ्यवती'
 कोटिबहुवाण्ड मुन्दरी रघिकहायवली श्रेय मुधमिधि 'माववती' 'सोभावती'
 इच्छावती कलावती आदि। उनका एक आत्मकारिक ग्रन्थ है रसपञ्चक
 जिसके पाँच परिच्छेदोंमें र स प क ङ पाँच अक्षर आदिका नियम
 रलित है। विश्व काव्य बन्धोदय एक विश्व और बन्ध काव्यका अच्छा नमूना
 है। उन्होंने एक कोप ग्रन्थ भी लिखा था। गीता विद्याल में काल्य पाल्य
 आदि अन्वयधरोको लेकर पम्पाको सजाया गया है। एनडिडिरिक्त इनकी
 छान्द्रनूपम पद षट्पु आदि अनेकानेक कृतियां और रचनाएँ पाई जाती हैं।

इनकी रचनाओंमें रीति कालके सभी लक्षणोंका सम्पूर्ण विकास हुआ है।
 कथा-वस्तुमें द्वितीयके रीतिकालीन काव्यके साथ काफी समानता है; किम्वदता और
 कूटोक्ति बहुत मात्राम में। कही नहीं पढ़नेमें पर अत्यन्त सरस और सरल
 लगते हैं। किन्तु उनमें कोई भीदरी बात छिपी रहती है। एक पर नीत्रिए।
 स्वप्नमें लावभ्यवतीके साथ चन्द्रमानका संयम होनेके बाद चन्द्रमान बला जाता है
 और लावभ्यवतीकी नीच दूट जानेपर उपेक्ष भङ्ग कूटते हैं —

केति चातुरो चाँहिला निशि नासे बाये नहिँ विष्य तद्वज
 मारिहूरे हुत बाव नाव बीलि अति उच्छेकरे पावय।
 जोमे धरीरे। बेतना हुत से विजिरे,
 योगे सैशदाइ कबरी किदाइ कर मरि कुच सविरे॥

दुख बड़ा कदम है। पर मरत और लज्जित है। किन्तु प्रश्न उठता है कि
 लावभ्यवती चन्द्रमानका रुँडती है तो मरता क्यों उलटती है? कबरी क्यों योक्ती
 है और कुच-समिपपर हाथ क्यों फेरती है? इसका अभिप्राय है कि नामकका नाम
 चन्द्रमानु है अर्थात् नाथक चन्द्र और मानु है। इतलिये क्या वे मुला राधिम बसे
 पए? राध्यामें भी मुला राधिम है क्या उसको राहु निवक क्या? केस-भार राहुके
 समान बाला है क्या वे अन्नाचलमें बसे पए? कुच अन्नाचल पर्वतके समान
 उच्च है। इन प्रश्नार के उत्तर अनेक कूट पर हैं।

सबमुख रीति रचनामें वे बहितीय हैं। इसलिए इस युगको मञ्जु युग कहा जाता है।

यद्यपि मञ्जु के भी बृमसरके इसी मञ्जु धरानेमें पैदा हुए थे और वे धनञ्जय मञ्जुके छोटे भाई योगेश्वर मञ्जुके लड़के थे। उन्होंने भी 'रसनिधि' और 'चिन्तोद-मोहिनी' रीति काव्य लिखा था।

रीति मार्गके सिवाय अन्य धाराएँ भी प्रबलमान थीं। विश्वनाथ बुध्दिदाने विभिन्न महाभारतके समान विभिन्न छन्दोंमें भरतुत सरस वाणीमें विभिन्न रामायण लिखी थी जो अत्यन्त लोकप्रिय रचना हैं। सिर्फ जाबकल ही नहीं उन दिनों श्री क्रिमुजों और प्रीतियोंके लिये साहित्य सृष्टिकी जाती थी। विभिन्न रामायण उही प्रकारकी सृष्टि हैं। इनहीं वासकी 'गोपी भाषा' भी इसी प्रकार का साहित्य है। इत्युक्त मधुरा गमनक बाद योपियोंकी कवय अवस्था इसमें बड़े ममत्वपूर्ण ढंगसे बर्णित है। इसकी भाषा सरस और मधुर है। इसमें कुछ मस्कीलता भी आ गई है। पुराण धारामें पिताम्बरदासका नरसिंह पुराण आता है। यह मूल रचनाका अधिकतम अनुवाद नहीं है इसमें बहुत अन्तर है। श्रीवती धारामें रामदासकी साईयता प्रसिद्ध जाती है। भक्त मार्ग के समान इसमें भक्तोंकी श्रीवती ही गई है— भयेकिया जुझाहा नदीर की भी।

पूर्वोक्त आलोचनासे पता चलता है कि मध्यकालके उड़िया साहित्यमें दो प्रवृत्तियाँ स्पष्ट थीं एक धर्म की ओर दूसरी रीतिकी। साध-साध यह भी लक्ष्य करनेकी बात है कि पञ्चसखाओंके समय अतन्त्रदेव उड़ीसा आये थे और धीरे-धीरे उनका भी सम्प्रदाय बढ़ बनाने लगा था। काल क्रमसे उड़ीसा वैष्णव धर्मका स्वतन्त्र गौड़ीय वैष्णव धर्म लेने लगा। इसलिये मध्यकालीन साहित्यके बाद उड़िया साहित्यमें गौड़ीय वैष्णव धर्म और रीतिकामीन कसल दोनोंका समन्वय देखनेमें आता है। इस कालम काव्य प्रायः राजा इन्द्र प्रेम परक है और कहीं-कहीं मस्कीलता भी आ गई है। किन्तु राजाइन्द्रकी लीलाकी बरलील नहीं कहा जा सकता। उनमें प्रवान प्रज्ञान कवि हैं—सदानन्द कविसूर्य बह्म (साधुचरण दास)। वे मयायङ्ग रियासतके सिखाटी पड़ामें पैदा हुए थे और पुरीके राजा कीर्तिहरदेव (१७२७ से १७८३) से उनको कविसूर्य बह्म को उपाधि मिली थी। उन्होंने 'कीर्तन उज्जल' के रचयिता बाबा किशोरदासच बीजा भी थी और उनका बीजा नाम का साधुचरण दास। वे गौड़ीय सम्प्रदायक अनुवादी थे। वैदेहीय विकास के समान उन्होंने 'ब' आद्य नियमसे विदग्धपर विलास काव्य लिखा था। उन्होंने प्रेम तरपिणी 'प्रेमलहरी' प्रेमचिन्तामणि कसित लोचना स्वरवीरिणी मुपलरसामुद्र कहुटे मुपलरसामुद्र प्रैवरी आदि अनेक छन्द लिखे थे। यदलरसामुद्र कहुटे के त्रितीय छन्दमें (घग) प्रत्येक परके प्रत्येक पंक्तिके आदिमें 'क' 'का' 'कि' आदिके बाद 'अ' 'आ' आदि उपपाद

नियम और प्रत्येक पंक्तिके अन्त्य वर्ण, एक युक्त वर्णवा नियम पालन किया गया है। उनके काव्योंमें उद्याङ्गका प्रेम ही मुख्यतया बणित है। और किशोरदेवके पुत्र स्वामिन्दरदेवने अनुपग कल्पलता मित्रो की निम्नमें अक्षरपद्धि नियम पाण्डित है। यह भी उद्याङ्ग परक कृति है।

जगत चरनदास उनका मधुर मंगल उड़ीसामें अत्यन्त प्रसिद्ध है। इसमें कृष्णके कंस बध तकली सीला बणित है और बोपियाँका चिन्हेर और विरह वर्णन अत्यन्त मर्मस्पर्शी है। रीति काव्य का स्वर्ण रहते हुए भी भाषा सरल है। इसमें जानकी अपेक्षा प्रेमके स्पष्टत्वका प्रतिपादन किया गया है। उनका मनबोधबोलीया भी मोहम्मदके समान चुपनेवाली भाषामें लिखा गया है। यह भी अत्यन्त लोकप्रिय रचना है। इनके बकाबा कम्पा फ्लेक्टर, चौतोसा मनसिद्धा आदि और भी उनकी कई रचनाएँ पाई जाती हैं।

अधिमन्यु सामन्त तिहार (१७१७-१८०७) उनके शिष्या और दोसा बुध साधु चरनदास (सदानन्द कविसुर्व) ने। वे रामपूठ ने और उनके पुत्र पुण्य परिषमसे आए थे। उनके 'विदग्ध चिन्तामणि'में माधुर्य भक्ति और रीति का अपूर्व समन्वय है। बीनकृष्णदासके 'रसकलोक' और उपेन्द्रमन्त्रके 'बैदेहीस विकास' के साथ इसकी बगना हो सकती है। रीति काव्यकी सारी विशेषताएँ इसमें विद्यमान हैं साथ-साथ विदग्ध माधुर्य ललित माधुर्य आदिमें प्रतिपादित प्रेम-माधुर्य और काव्य—माधुर्यसे भी यह रचना आकाङ्क्षित है।

कवि जीवनके प्राथमिक दिनोंमें उन्होंने प्रीति चिन्तामणि मुख्यतया रसबन्दी प्रेमकला रसकला आदि हुई काव्यप्रतिक काव्य और कुछ गान भी लिखे थे।

इस कालमें कई संगीत या पद्यावली कर्ता भी हुए हैं जिनमें बतमाती पट्टनायक गौरचरन अधिकारी योपालकृष्ण पट्टनायक प्रसिद्ध हैं। उद्याङ्ग प्रेम ही इन सबके काव्यके उन्नीय है। योपाल कृष्ण ई १८२६ तक जीवित थे। कोटिपुत्र उड़ीसो गावमें उनके पर बटुडे गाने जाते हैं।

इसो कालमें विभिन्न हरिचरणने 'बसन्तरास' लिखा था। जिनकी भाषापर बहबुक्ति का प्रभाव दिखाई देता है। य२ भी सर्वोत्तम है। इन संगीतको परम्परागत बन्देबदरन कविसुर्व माने हैं। उनका चम्पू अत्यन्त सजीव और प्रसिद्ध है। उन्होंने 'किशोर चन्द्रानन्द' चम्पू रत्नाकर' आदि चम्पू काव्य लिखे हैं। किशोर चन्द्रानन्द चम्पूका गद्यांश लखनऊमें और पद्यांश उड़ीसा मगीनम सिद्धा गया है। चौनीयाके ममान प्रत्येक मीनकी प्रत्येक पंक्तिके आदिमें क 'य' ग आदि का नियम रक्षित है। ये चम्पू गीत भी कोटिपुत्र में अत्यन्त प्रचलित है। उनकी मृत् ई १८९० में हुई थी। उन्होंने 'चन्द्र कला' नामक एक काव्यप्रतिक काव्य भी लिखा था। इसमें पता चलता है कि प्रेम भक्ति और रीतिका सब अर्थ समिधन मही हो पाया या बौद्ध विमूढ रीति काव्य भी लिखे जाते थे।

विद्युत् रीति परम्परामें यदुमन्त्रि महापात्र भी आते हैं। रीति कर्मभानुमार उनके प्रबन्धपूजकश्रोत्रय में भी कल्प्य और इतिमन्त्रीका दिवाह बणित है। ये हास्य प्रिय भी ये और 'यदुमन्त्रि' नामसे उनकी हास्य पूर्व रचनाओंका एक संग्रह पाया जाता है। उनका जन्मकाल ई १८१० और मृत्यु काल ई स १८३६ था।

इस धारामें प्रधानतया दो व्यक्तिक्रम पाये जाते हैं—एक ब्रजनाथ बड़वेना और दूसरे भीम भोई। ब्रजनाथके दो महत्वपूर्ण ग्रन्थ हैं—'ममरतरंग' और 'चतुर्विन्दोद'। ममर तरंगमें तत्कालीन एक ऐतिहासिक घटना—नागपुरके विमनाजी बापुके साथ डेंकाताके राजा त्रिभोजन महेश्वर बहादुरके यज्ञका बर्षन निराके डंगसे किया गया है। इसमें हास्य रसका भी समावेश है। यह एक ऐतिहासिक काव्य है। 'चतुर्विन्दोद' एक हास्य रस प्रधान काव्य है और बहू भी पद्यमें। 'चतुर घण्ट'में कथ्य है—'चतुर या पण्डितोंका विन्दोद जिनके चार सेव किये गये हैं—हामविन्दोद रमविन्दोद नीतिविन्दोद और प्रीति विन्दोद। उनका गुणित्वादिसे नामका एक काव्य मिलता है। यह हिन्दीमें छोट्ट राबमें लिखा गया है। ममरत उन दिनों भी हिन्दी राष्ट्रभाषा थी। उन्होंने कई रीति काव्या भी लिखे थे—'अ चारादि नियमसे बन्धिका विकास य काचदि नियमसे यमामरामोत्सव काव्यमिक काव्य कैलिकला निधि बिलगणा आदि। उनका जन्म ई १७३१ में और मृत्यु घायर ई १७९५ में हुई थी।

भीम भोई ब्रह्मन्त्र के और आदि कव्य (मादिवासी)। वे कुम्भपत्रिका या महिमा धर्मके अनुयायी थे और महिमा गोमाह के उपासक। वे निरलर से भक्ति उन्हींन जगताकी सरस और सुबल भावामें स्तुति चिन्तामणि ब्रह्म निरूपण गोपा और अनेक भजनोंकी रचनाकी थी। उनकी रचनाओंमें महिमा धर्मके अनुसार निराकार पुरुषका प्रतिपादन किया गया है। वे सबभूष प्रयादिण और प्रजाबन्धु थे। उनका काल ई ई १८६०—१८९३। इसलिये रीति काव्यम उनको नहीं रखना चाहिए। मेकिल साहित्य प्रकृतिकी दृष्टिसे वे 'बौद्ध यान ओ दौढ़' और पञ्चमहाकी परम्परामें आते हैं न कि आधुनिक कालमें। इसलिये उनको यहीं स्थान दिया गया है।

आधुनिक युग

'मध्य युगमें मयल काम (ई १३९८—१७७३) और मरठठा काल (ई १७७३—१८३१) तथा बादमें ब्रिटिश काल शुरू हो जाया है। अंग्रेज उड़ीमामें ई स १८३१ में आए और वहीं आधुनिक युग प्रारम्भ होता है। आधुनिक युगका प्रबन्धन प्रायः सब प्राण्णोंम एजन्ना हुआ है। पंथिन्त्रिकि प्रबन्धन वही आपे और कहीं पीछे नहीं बन्द ही बड़ी जयादा।

ई सन् १८०३ में अंग्रेजोंके आ जानेपर तथा मिर्जापुरी लौकोंके धर्म प्रचार को बढ़ावा देनेके लिये, रामपुरसे ब्राह्मिन्सका उड़िया अनुबाह प्रकाशित हुआ। इसी उद्देश्यकी पूर्तिके लिए अंग्रेजी उड़िया अधिबान और अंग्रेजोंमें उड़िया व्याकरण भी लिखा गया। शिक्षा की नीति भी बदल दी गई और एक नव्य मिलिन समाज

उभरकर सामने आया। अंग्रेजी पढ़ने वालों को मौजूरीमें मुविधाएँ दी जाने लगीं। गला प्रकाशसे लीगीकी अंग्रेजी शासन और अंग्रेजी शिक्षाके प्रति आकृष्ट किया गया। उसी कालमें उड़ीसामें भीपत्र अकाश पड़ा जिससे ईसाई धर्मके विस्तार और प्रचारको बहुत सहारा मिला। इसका सम्बन्धन बंगालसे होता था। मिथमरी लोग बहूँधि जाते थे। उड़ीसापर ब्रिटिशार आमानेके पहले बंगाल अंग्रेजोंके शासनाधिकारमें आ चुका था। बंगालमें राजा राममोहन रायके प्रभावसे वहाँ अंग्रेजी शिक्षाका प्रसार और उसके फलस्वरूप एतद् नव्य सिद्धि समाजकी सृष्टि हो चुकी थी। उसके अनुकूल नये साहित्यका आबिर्भाव मूर्त भी हुआ। लोप आकृष्ट हुए और उसी प्रकारके एक समाजकी सृष्टि हुई। इसके मूलमें अंग्रेजी भाषा और आधुनिक पद्धतिकी शिक्षा थी। इसलिए जो नाम पहले मिथमरी लोगोंके हाथोंमें था उसीको उड़ीसाके बंगाली मराठी और उड़िया लोग भी करने लगे। यह नूतन शिक्षाका काल था और यह करीब २ सौ टक बसता रहा। इसलिए इसको पाठ्यपुस्तक का क भी कहा जा सकता है। अंग्रेजी शिक्षाके प्रभावसे अंग्रेजोंके आचार व्यवहार और साहित्य के प्रति भी लोग आकृष्ट हुए और पहले साहित्यमें एक विप्लव आया किन्तु वे प्राचीन प्राचीन साहित्य और संस्कृत तथा फारसी साहित्यसे सम्पूर्ण रूप से विचिन्म नहीं हुए। हिन्दी साहित्यका भी बड़ा बहुत प्रभाव पड़ा। उसी कालके प्रधान कवि रामानाथ राय हैं।

रामानाथ राय उनके पूर्व पुत्र बंगाली थे। जन्म लगभग ई १८४० म और देहांत ई १९०० में हुआ था। उनकी शिक्षा प्रबोधिका परीक्षा तक ही हुई थी। वे पहले शिक्षक थे और बादमें विद्यालय निरीक्षक हुए। उन्होंने कई पाठ्य पुस्तकें भी लिखी थीं किन्तु वे अपने कामके लिए प्रसिद्ध हैं। उनपर सेक्सपियर, मिस्टर वास्टर स्ट्राट आदिका प्रभाव स्पष्ट है। उन्होंने विर्मंस और बिसेके आचारपर केदार गौरी और अटलदास के आचार पर उषा आतेबाइसके अगामेयनके आचारपर पार्वती (अपूर्ण) काव्य लिखा था। किन्तु प्रीक कहानियोंपर आधारित होनेपर भी इनके नाम इस प्रकार बरक दिए गए हैं और उड़ीसाके स्वलो पठकी गरियों पढ़ाई और सुगोतकी इस प्रकार जोड़ दिया गया है कि उनमें विदेशीपन झरझरा ही नहीं। सबसुख के अत्यन्त दुर्मल शिष्यी हैं। चितिका उनका एक लघु काव्य है और उसमें उनका बंगालभोज और बुधालभोज एक सौम्यरसोच स्पष्ट है। उन्होंने 'नन्दैवरी' 'क्यातिकेसरी' आदि कुछ ऐतिहासिक काव्य भी लिखे हैं। वे सब उड़ीसाके इतिहासपर आधारित हैं। रामानाथ अमिनातर उत्तम विविध प्रकार उड़िया महाकाव्य हैं। इसपर मिलनका प्रभाव स्पष्ट है। इसकी भाषा बड़ी ही उड़ीस है। इनमें बुधालेठका स्वर्गरोहण वर्णित है। उन्होंने मेघदूत और सुन्दरी लवकके नामसे सुन्दरी पदावलीका

उद्दिष्ट पद्यानुवाद भी किया है। उन्होंने पौराणिक रीतियों से बेजीसंगर लिखा था। इसके अलावा 'दुर्घोषनका रक्तनदी सतरज' 'दिवाजोकी उत्साहवाणी' आदि कई फुटकर कविताएँ भी लिखी हैं। १८९६ ई. में बारबारी किछेम बागुठिन बरबारको सम्बन्ध कर उन्होंने 'बरबार' नामसे एक व्यंग्यात्मक कविता भी लिखी थी। उसमें उपाधि पाने वालोंको ध्यम करते हुए, अंग्रेजी शिक्षाके प्रभावसे कृपयवामी लोगोंकी बिस्फी उड़ाई गई है। इतालवीय 'मुवा बिबेची' आदि उनके कुछ गान भी पाए जाते हैं किन्तु उसे गद्य नहीं कहा जा सकता। पद्यकी भाषा और शैलीमें उन्होंने एक सुगान्तरकारी परिवर्तन किया। आधुनिक युगके वे छाप्टा माने जाते हैं। उनकी रचनाएँ 'प्रधानाव प्रन्वावकी के नामसे छपी हैं।

मधुसूदन राव (ई १८३३-१९१२) उस नामके एक और पद्यकी कवि थे। उनके पूर पुष्य मराठे थे। उन्होंने एक-ए लच्छी शिक्षा ग्रहण की थी और राघवनाथ रामके समान पहले शिक्षक होकर बादमें स्कूल इन्स्पेक्टर हुए। किन्तु प्रकृतिसे वे शिक्षक ही थे। उन्होंने अनेक पाठ्य पुस्तके लिखी और उसी प्रसंगमें अनेक कविताएँ भी। उनके गीत और कविताएँ उद्दिष्ट साहित्यमें एक प्रमुख स्थान रखती हैं। वे ब्राह्मणमाजी थे। मठ उनकी कविताओंका प्राण था मानवमयता अतिमात्र और ईश्वर प्रेम। इसलिए वे अनेक कविके रूपमें प्रसिद्ध हैं। उनकी जीवन चिन्ता आशास प्रति अपि प्राणे देवान्तरज हिमाचले उद्यम उत्सव पद्मध्वनि आदि कविताओंमें ये भाव स्पष्ट हैं। उनकी कविताओंमें देशात्मबोध की भी छाप स्पष्ट है। उन्होंने अगुण्यपदी (Sonnet) भी लिखी थी।

उद्दिष्टका मध्य भी उनका अन्तर्गत है। पद्यकी भाषाको उन्होंने परिमार्जित रूप दिया और प्रबन्ध साहित्यका प्रवर्तन किया। उन्होंने बाल रामायण 'उत्तर रामचरित और कुछ अंग्रेजी कविताओंका अनुवाद भी किया था। अलेक्जेंडर सेल्-कार्ड नामक अंग्रेजी कविताका "निर्वासित का विकास" नामसे अत्यन्त सफल अनुवाद किया है। उनकी रचनाओंका संग्रह एक प्रन्वावकीमें छपा है।

रामदास राम के बिलेपकर नाटककारके रूपमें प्रसिद्ध हैं। उन्होंने प्रेमवती नामसे एक गाथा काव्य लिखा था। उनका विवाहिनी एक उपन्यास भी उपलब्ध है जिसमें मराठाकालीन उद्दिष्टका समाज चित्रित है। उसके पहले सीरामिनी नामसे एक उपन्यास मधु मासिक पत्रिकामें धारावाहिक रूपसे प्रकाशित होता था। किन्तु पत्रिकाका प्रकाशन बन्द हो जानेके कारण वह अनूद्य हो रह गया और श्रेय भंग हो भी गया। उनका एक और उपन्यास उमादिनी का कुछ मग इत्यन्तु पत्रिकामें प्रकाशित हुआ था किन्तु कोई ही दिलामें पत्रिका ही बन्द हो गई। जो कुछ भी हो वे उद्दिष्टके प्रमुख उपन्यासकार माने जाते हैं। अन्त में नाटकका अतिमय देखकर उनकी दृष्टि नाटककी ओर आकृष्ट हुई। लोग कहते हैं कि उद्दिष्टनाम नाटक सफल हा ही

महीं सक्ता किन्तु उन्होंने पुस्तोत्तमदेवके चरित—लेखनमें ह्यम लामा और 'काञ्चकावरी' नाटक लिखा। इसका अभिनय सफल हुआ जिससे उत्साहित होकर और लोग भी नाटक लिखने लगे। उन्होंने ऐतिहासिक समाजिक और पीरानिक नाटक मीठि नाटक प्रहसन तथा माया आदि विषयोंपर भी लिखे हैं। उनके नाटक हैं—'काञ्चकावरी' बनगाला राम बनवास कसबन्न बिस्मोदक युग धर्म 'काञ्चनमासी वैश्य लीला लीलावती रामाविवेक विषय यत्र (मीठि नाटक), कलिकास और बुढावर प्रमुख हैं तथा 'बड़लोक' एक माया है। उन्होंने हिन्दुस्तानी राग रादिनिबोका नाटकोंके पार्योंमें सफल प्रयोग किया है। उन दिनों आठोयठाका उन्धेप हो चला था तथा साब ही साय समाज सुधारकी भावना भी चल रही थी। ये दोनों उमकी कृतिमोंमें प्रतिफलित हैं। किन्तु वे समाज सुधार माय संस्कृतिके परम्परानुसार बाहुते थे न कि यंत्रोचो सिंसाकी अन्ध अनुकृति पर।

इसी काकम उमेसचन्द्र सरकारने 'पद्माली' नामक उपन्यास लिखा था। इनके अलावा मनिचरण महापात्र चन्द्रमोहन महारजा बामण्डाक राजा मुद्रक देव आदि और कई केबक हो गए हैं।

आधुनिक काकके पूर्वोक्त प्रथम पर्यायमें अंग्रेजोंने अपना अधिकार बूढ़ कर लिया और इसी उद्देश्यसे अंग्रेजी शिक्षाकी नींव भी सुदृढ़ कर ली थी। भारतमें अंग्रेजी शिक्षा तीन कूर्णों—छोपन शासन और सम्बरणपर प्रतिष्ठित थी। वे यहाँ छोपन करनेके लिए आए थे इसलिये शासनकी बायडोर हाथमें लेना जरूरी हुआ। और उसक लिए शिक्षाके माध्यमसे एक बर्बकी सृष्टि करना भी आवश्यक हुआ जिससे लोग अपनेको अंग्रेजोंका बूसर घत्करण समझे। इस प्रकार यहाँ दो छोपक बर्बोंकी सृष्टि हुई एक जमींदारोंकी और दूसरी अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त नौकरसाहोंकी। एक बात और। उस समय बंगाल बिहार उड़ीसा एक प्रान्त था और उसकी राजधानी कलकत्ता थी। अंग्रेजोंने एक सूर्यस्त कानून (Sun-set Law) बनाया जिसके अनुसार जो जमींदार सूर्यास्तके पहले बकाया रकम नहीं चुका देता था उसकी जमींदारी उसी दिन नीलाम की जाती थी। इस कानूनके कारण उड़ीसाकी अनेक जमींदारियाँ बंभालियोंके हाथमें चली गईं। एक परम्परगत पुण्ये समाजका लोप हुआ और नये समाजका आविर्भाव। बंगालमें पहले अंग्रेजी शिक्षा फैली और बड़ीच अफनराज उड़ीसा आए। यहाँ की शिक्षाके पनमें भी उन्ही लोमोंका मुख्य हाथ था। ठीक उसी समय राजेश्वरकाक मित्र आदि लोगाने एक वाक्यो लन कायाया कि उड़िया एक स्वतन्त्र भाषा नहीं है। इस प्रकार उड़ीसा प्रथम उड़िया भाषा और उड़िया गन्धुनिके ऊपर एक नारी विपत्ति दिखाई दी। सन्धिवन विधीमों और अक्षरनामोंके प्रतिकारके लिए यहाँ उत्कल भूमिम्नी नामकी एक संस्था १९ ३ ई में स्थापित की गई जिसके प्रतिष्ठाता मधुसूदन राम थे। इसके अलावा

एक और उत्कृष्ट साहित्य सन्मिकिनी प्रशिष्ठ है। इसके पहले भी पापा और साहित्यके उन्नयनके लिए कुछ लोग सामने आए, जिनमें मुख्य वे फकीरमोहन सेनापति।

हेबलबी फकीर मोहन सेनापति (ई १८४३-१९१८) वे साधक और कुशल सिन्धी थे। उन्होंने बार उपन्यास लिखे लक्ष्मा जमान बाठगुठ मामु और प्रायश्चित्त। मराठा शासन कालके पीछे उड़ीसाका एक कवच चित्र 'सठमा' में दिया गया है। परन्तु हीन तपे जमीदार बबके निर्लम्ब घोषण का ओबन्त चित्र समान बाठगुठ के जमीदार रामचन्द्र मराठामें दिया गया है। आधुनिक शिक्षा प्राप्त निम्न-मध्य श्रेणीके किस प्रकार देखो तहस-नहस कर दिया या उसका एक परिप्रेषित चित्र मामु और प्रायश्चित्त में मिलता है। वे कर्मचारी थे। इसलिए सभी कृतियोंमें पुण्यका सम्बन्ध और पापका पतन दिखाया है। उन्होंने अनेक गल्प भी लिखे हैं। 'गल्प सत्य' नामसे उनका दो भागोंमें संप्रह प्रकाशित हुआ है। इनमें वे सकारवादी रूपमें प्रकट हुए हैं और अनेको सिखाके कुफलोकी इनमें कड़ी समालोचना की गई है। किन्तु भाषा उब नहीं है। इसके लिए उन्होंने हास्य व्यंग्य एवं विद्वपताका सहारा लिया है। किन्तु यह पाठकपर बहुत कदमपुस काप छोड़ जाता है। हास्य रसम वे बेजोड़ हैं। उन्होंने अपना आत्मजीवन चरित्र भी लिखा या उसमें उन दिनोंके समाजकी अच्छी शक्ती मिली है। उन्होंने रामायण महाभारत बिछ हरिवंश छन्दोग्य उपनिषद् आदिना पद्यानुबाह किया था। 'बीडावतार' उत्कृष्ट घमण' आदि काव्य लिखे थे। उनको अनेक फुटकर कविताओं का संप्रह अवसर बाधरे में किया गया है किन्तु पद्यको अपेक्षा उनका पद्य अधिक बलिष्ठ है। वे इतने चकितशाली और प्रभावशाली थे कि कुछ लोग उन्होंने नामसे आधुनिक युगका नामकरण करते हैं। वे सब प्रकारसे उड़ीसाकी धरतीकी सन्तान थे। अंग्रेजी शासन और अंग्रेजी भाषाको प्रहय करते हुए भी उन्होंने अपनी दृष्टि मिट्टीकी तरफ मोड़ी। उनमें फकीर मोहन सेनापति थे।

इसी कालमें गमाधर मेहेर मन्त्रकिशोर बस चित्तामणि महाण्डि लक्ष्मी-काण्ठ महापात्र पोनाकचन्द्र प्रहृयज मिफारीचरय पट्टगायक मोपीनाथ मन्त्र आदि और कई प्रसिद्ध कवि और कवच हुए। उनमेंसे गमाधरकी जर्जा अस्मा होगी। मन्त्रकिशोर बस (ई १८७५-१९२८) पत्नी कवि आख्यासे परिचित हैं और उनकी कविताका उन्नोम्य पत्नी हैं भी। उन्होंने पत्नी चित्र निररपी जग्म-भूमि प्रभावगोत लक्ष्मी संतोत आदि अनेक पत्नी कविताएँ लिखी हैं। उन्होंने घमिष्ठा एक वाच्य और कनककना एक उपन्यास भी लिखे हैं। उनके कुछ समालोचनात्मक लेख भी हैं। चित्तामणि महाण्डि अनेकानेक काव्यों उपन्यासों लुट पत्नी मीठों और कविताओंके लेखक हैं और बार विद्यालयोंमें उनका संप्रह प्रकाशित हुआ है। उड़िया भाषा तथा भाषाके प्रति स्नेह

इनका मुख्य उपादान है। लक्ष्मीकान्त महापात्र हास्य रसके एक सफ़ल सिद्धी थे। उनकी अनेक व्यंग्यारमक साधिकाएँ हास्य रसात्मक कविताएँ तथा व्यंग्यपूर्ण नाटक उपलब्ध हैं। कणा मामु उनका एक अपूर्ण और अपूर्ण उपन्यास है। लक्ष्मी चम्पलसिन्हा उनकी एक नाटिका है। गोपाकचन्द्र प्रहराज का व्यंग्य और विद्रूप अधिक तीव्र होता है। उनकी बाई महाति पाण्डि और मुबस्तानी में इस प्रकारके कटु व्यंग्योका समावेश है। उन्होंने पहले लोककलाओं और लोकोक्तियोंका संग्रह किया था। उनका भाषा-कोश भारतीय प्रांतीय भाषाओंमें सबसे विशाल है। भिकारीचरण पट्टनायक प्रथम नाटककार है। उनके नाटक हैं—'कटन विषय' संसार चित्र मुसीका' आदि। उन्होंने भीर विजय माला करन साभान्तकु इस भी लिखा था। पीछे उन्होंने कुटीर सिद्धके निवासका प्रारम्भ किया, और एक कुटीर शिल्प सिरीज' निकाली बोधीनाम मन्त्र मुस्यत प्रबंधकार थे। उन्होंने उड़िया भाषाके दार्शनिक रामायण और वारणा महाभारत आदिकी पाश्चित्यपूर्ण ब्राह्मणना लिखी। उन्होंने एक प्रकृति अभिधान और उड़िया भाषा शब्द पर उसी नामसे एक विषाक ग्रन्थ लिखा है। इसके अलावा उन्होंने कई संस्कृत नाटकों और काव्योंका अनुवाद भी किया था। प्रबन्धकारके रूपमें रामानाथ रामके पुत्र पश्चिमुपन राम और विरवनाथकर भी प्रख्यात हैं।

इस प्रकार जब उड़िया साहित्यकी उन्नति हो रही थी तो आधुनिक युद्धके रक्षक पश्चिमके अन्तिम कालमें बीसवीं शताब्दीके प्रारम्भमें फिर कुछ परिवर्तन हुआ। रामानाथ मधुसूदन और फकीरमोहन समकालीन थे। रामानाथने प्रतीक्ष्य पद्मताका आवाहन किया था और मधुसूदन ने उस आशयमें प्राण्य संस्कृतना योज किया था। फकीरमोहनने अंग्रेजी सासकना स्वागत करते हुए अंग्रेजी सिद्धके कुफलोंकी ओर लोकोका ध्यान आकर्षित किया था। मन्त्रिकिंदोर पन्नीकी ओर लोकोको ले गए थे। लेकिन वे सब आतीयतावादी कवि थे। इस प्रकार हम देखते हैं कि बीरे-बीरे बेसामे आतीयता जागृत होती गई। १९०६ ई में उत्कल सम्मेलनीकी प्रतिष्ठा १९२२ में बंग दिग्देह माण्डोक्त और १९१२ में बिहार उड़ीसा प्रदेशके पन्त्र द्वारा एक आतीय वेदनाका बैग और लीज हुआ। उड़ीसामें भी आशा उत्पन्नित हुई कि उड़ीसा एक अलग प्रदेश हो सक्ता है। इस उद्ये जातीयता बोधके साथ समाज सुधार और जनताकी मश का कार्यक्रम धारित कर दिया गया। इनी उद्देश्यम मुनी विमके सरयवादी मांसी गोपालम एक आतीय बत विद्यारण्य स्वाधि किया गया विमके प्रतिष्ठाता पापकानु राम थे। मत्पवारीके कर्षियोंने नया आदर्श लेकर पाश्चित्य और नए युगकी मूल्की, विद्यारा नाम सरयवादी युव पद गया। इनमें उद्देश्यका गौरव और आतीयता बोध इतना उद्ये था कि उड़ीसामें इनी प्रकारका प्रथमान के बर्षाने मही करन थे। यहाँ तक कि रामानाथने मन्त्रिकरवरी पार्थनी मदि काव्योंमें उड़ीसामें इतिहासपर जा आरोप किया था उनका भी प्रतिबोध किया।

इस जातीय जागरण और मरमबारी बन बिद्यालयके मुख्य थे गोपबन्धु दास और उनके आह्वानसे उद्बुद्ध होकर मीरठराजदास गोदावरीन मिश्र कृपासिन्धु मिश्र सिगराज मिश्र इतिहरदास प्रमुख इसमें शामिल हुए। कृपासिन्धु मिश्रने उड़ीसाका इतिहास कोषाक और बाराबाटी उड़ीसाके प्राचीन और प्रख्यात ऐतिहासिक ग्रन्थ लिखे। सिगराज मिश्रने संस्कृत रामायणका अनुवाद किया। नीलकण्ठदासने टेनिसनकी प्रिन्सेम के आधारपर प्रथमिनी और इनोएन आर्ट्सके आधारपर दास नामक लिखा वा और खारबेल तथा कोणार्क दो काव्य लिखे ये जिनमें जातीयताका भाव व्यक्त उग्र है। उन्होंने जाय जीवन नामक एक प्रबन्ध ग्रन्थ और भगवत्प्रीताकी टीका व्यत्यन्त पाण्डित्य पूर्व मुखबन्धमें लिखी है। 'सम्पृष्ट बी मस्कृति' 'ओड़िया साहित्यका क्रम परिणाम आदि उनकी और बनेक कृतियाँ हैं जो कुछ परवर्ती काळकी हैं। गोदावरीन मिश्र के दो नाटक हैं— पुरपोत्तम देव और मुकुन्ददेव। उनकी माया कविताओंका संग्रह कलिका विमलय आलेखिका नामसे प्रकाशित हुए हैं। वे माया कवितामें सिद्ध हस्त थे। उनके अभाषिनी निबन्धिता 'वटान्तर आदि कई उपन्यास भी हैं। नेपोस्मियनकी एक जीवनी भी है। परवर्ती काळकी भी उनकी बनेक कृतियाँ हैं, जिनमें बर्ड घणाम्बीर बीड़ियारे मो स्वान उनकी आरम जीवनी उत्कृष्टतम है।

इसी काममें महात्मा पंडीने कावेसका नेतृत्व कर १९२१ ई में अग्रहयोग आन्दोलन शुरू कर दिया। उड़ीसामें क्षेत्र प्रस्तुत था। सरमबारी बन बिद्यालयके कार्यकर्ताओंने मौका पाते ही उसमें सहयोग दिया और उन लोगोंको बेल बना पड़ा। गोपबन्धु दास जब हजारो बाग जेलमें थे तो कारा कविता बन्धीर आरमकया अबकास चिन्ता मो माहात्म्य मधिकेता धर्मपद आदिकी रचना की थी। धर्म पद में कोषाकके शिल्पी शिम्पु महापताक पुत्र धर्मपदका कवच जीवन चित्र दिया गया है।

सन् १९२१ तकके उड़िया साहित्यकी यही संक्षिप्त कहानी है और इसके बाद ता उड़िया साहित्यके इतिहासकी कति ही बहल जाती है।

[नोट—सन् १९२ से आज तकका उड़िया साहित्यका संक्षिप्त परिचय कवि-प्री माता-कालिन्दीचरण पाणिग्राही में दिया गया है।]

गगाधर मेहेर

[कवि-परिचय]

गगाधर मेहेर



सम्बलपुर जिलेके बरतड़ तहसीलके पश्चिममे एक छोटी-सी बनीबारी है बरपाबी। बड़ी ९ अगस्त, १९६९ भाषण पुष्पिकाको संपाधर मेहेरका जन्म हुआ। मेहेर उनकी सपाधि है। आसिसे के 'मुलिया' से और मुलिया सोप प्राय 'मेहेर' कहलते हैं। के सोप व्यवसायकी दृष्टिसे ठाँठी या बुलाहे होते हैं। बुलाहेको उड़ियामें 'मुला' या मुलिया (शोशिया) कहा जाता है। कबीरबासनीको उड़िया साहित्यमें शोशिया कबीर कहा गया है। कबीर मुलिया' से और मेहेर 'मुलिया' नामूम पड़ता है कि 'मुलिया' और 'मुलिया' में कोई सम्बन्ध है। मुलिया सोप सम्बल पुर और बास-पासके सम्बन्धमें रहते हैं। लेकिन उनकी माया उड़िया बचवा सम्बल पुटी बोनी भी नहीं है कतीसगड़ी या करिया भी नहीं। उन लोगोकी मायाका अध्ययन नहीं हुआ है। लेकिन उसका कतीसगड़ी या करियाके और उत्तर या पश्चिम की मायासे सम्बन्ध है। उस बातकी स्विपोंका पहिमावा भी कुछ बकव है। स्वपाससे के सोप बड़े घरक और धर्मपरायण होते हैं।

संपाधरके पूर्वज सम्बलपुर शहरके निवासी थे। उनके प्रपितामह केचव मेहेर बरपाबीमें थे। उनके पाँच लड़के थे इसलिए उनका परिवार पाँच भाईया परिवार कहलावा बा और उनकी मकान मुंडि मन्दिर या भागवत मण्डपके निकट था, इसलिए बुद्धिबिजा भी कहलावा है। एक का बर्ष उड़ियामें 'नीचे' होता है। योड़ि (मन्दिर) या भागवत मण्डप साधारण बैठकवानेके रूपमें व्यवहृत होता है।

वहाँ छाधु-सम्पासी लोग बाहर भाष्य भी करते हैं। वहाँ छाधारणतया वर्ग बर्बाद होती है। ऐसे ही एक परिवारम गगाधर मेहेर का जन्म हुआ था।

गंगाधर मेहेरके पितामह उवाशिव मेहेर सबसे छोटे थे। वस्त्र बुनना उनका मुख्य व्यवसाय था। बैद्यक और ज्योतिष विद्याका भी उन्हें ज्ञान था। उवाशिवके दो पुत्र थे और उनमेंसे बेचठ वैठम्म मेहेर गंगाधरके पिता थे। इनकी माताका नाम सेवती था।

गंगाधरकी शिक्षा ग्राम्य पाठशाळामें शुरू हुई थी। उनके पिताकी एक चाठशाळी पाठशाळा थी जिसमें उड़िया भाषाके पाठ एवं कुछ काम्य ग्रन्थके छन्द पढ़ाए जाते थे। किन्तु गंगाधरके जन्मसे पूर्व ही यह पाठशाळा टूट चुकी थी। इसलिए अपने मकानके निकट एक अन्य चाठशाळी पाठशाळामें उन्होंने सिद्धिरत्नु किया। उन दिनों पहले सिद्धिरत्नु या 'सिद्धिरत्नु' किबाकर जन्मा इत्यादि बर्धमाळा सिखाई जाती थी। किन्तु वहाँ 'रास पञ्चाध्यायो'के तीन-चार अध्याय हुए ही थे कि यह पाठशाळा भी टूट गई। यह देखकर उनके पिता उन्हें नाम रत्नशीला पढ़ाने लगे। नाम रत्नशीला बीनकृष्णदासके उत्कलीय वैष्णव सम्प्रदायके अनुसार एक उत्कपरक और दिव्या मूलक ग्रन्थ है। शुरूमें उनके ताब पाठके पाँच-छान लड़के भी पढ़े थे। कुछ ही समयमें लड़कोंकी संख्या पञ्चीस-तीस हो गई। और अब यह उनके पिताकी एक पाठशाळा ही गई। वहाँ गंगाधर बगलाबदासकी 'धावदठ' मंत्रचरम दासके 'मधुरा मपल' आदिके छन्द अच्छी तरहसे ना सकते थे। इस समय तक गंगाधरकी उम्र दस वर्ष की हो गई थी। इसी उम्रमें उनकी धारी भी हो गई। धारीमें कुछ कर्म भी हो गया। उनके पिता कपड़ा बुननेम इतना ध्यान देते थे इसलिए बिना कुछ दिए उन्हें बरसे अन्नग कर दिया गया। कुछ दिनों तक उन लोगोंकी बहुत कष्टमें बुजर-बसर करना पड़ा। बहुत कहासुनीके बाद उन्हें वैद्यक सम्प्रदायमेंसे कुछ हिस्सा मिला जिसमें कष्टका कुछ विश्रान्त हुआ। इन लज्जतीमें पाठशाळा टूट गई और पढ़ाईका काम बन्द हो गया।

उन दिनों बरवालीमें एक सूल था। उसमें उनकी नाम लिखानेकी इच्छा होती थी किन्तु किमीने कइ नहीं करने थे। उनका कारण यह था कि उन दिनों किन्तुके अनुसार यदि कोई लड़का बैर्यात्रि रहें तो उनके पिताको बरन्ध जाकर कठिन शारीरिक बन्ध भोगना पड़ना था। एक बार गगाधरके तहसीलदार बरवाली जाए थे। पाठके (मुद्रकेके) किसी दुरमन ने ईर्ष्यावश गंगाधरके पिताका नाम तहसीलदारके पास लिखा दिया। इसमें गंगाधरकी प्रमत्त ही हुए, उनके धर्मियता चम्पा कुछ तो गलत ही गया। इनके दिन बरवाली उनको बुला ले गया और वे नियमित रूपम कुछ दिन ब्रह्मचर्य रहना जाने लगे। यम्बकपुरमें मरीमें बीनहूरकी पुरान-पाठ होना था। उन दिनों बरवासरके रामायणका पाठ होना था। मन् उनको मुननेकी इच्छामें वे कुछ दिन मूलक आपस्थित रहें

किन्तु पिता द्वारा डाँटे जाने पर वे फिरसे जाने लगे। कभी कभी स्कूलके शिक्षक पाठ्य-पुस्तकोंके अलावा ईश्वरचन्द्र विद्यासामरका सीमा बनवास भी पढ़कर सुनाते थे। वालक संसारको यह बड़ा अच्छा लपटा था। इस तरह पाँचवाँ कक्षा तक उनकी शिक्षा गाँवमें हुई। जब परीक्षा देनेके लिए सम्बलपुर जानेका प्रश्न उठा तो उनके पिताने जनमति नहीं दी। बपकि दिन थे। महानदीय बाढ़ भी जिस माससे ही पार करना पड़ता था। इसलिए उनके पिताको उन्हें मेढनेका साहम नहीं हुआ। इस प्रकार परीक्षा देनेसे बञ्चित होकर वे रो पड़े। फिर वे उगी कक्षामें पढ़ने लगे। करीब एक साल बाद विद्यकने स्वयं ही छठी कक्षा भी प्रारम्भ कर दी जिसमें मास पाठ्य क्रमके साथ 'रघुवंग' भी पढ़ाया जाता था। किन्तु कुछ ही दिनाके बाद विद्यकके छुट्टीपर चले जानेसे स्कूल पाँचवी कक्षा तक ही रह गया। छठी कक्षाके मास-मास संगारकी पढ़ाई भी बन्द हो गई।

पढ़ाईके मास-साथ वे घरपर कपड़ा बुननेके काममें पिताकी मदद भी करते थे। सारे विद्यार्थी बीबनमें कभी उनको एक अच्छा कपड़ा या बुना पहननेको नहीं मिला।

पढ़ाई समाप्त होनेपर दिनभर वे श्रम काम किया करते थे लेकिन जब कभी थोड़ा बहुत समय मिलता तो उसे वे पढ़नेमें ही लगाते थे। गाँवनेपर जो भी अच्छी पुस्तक उन्हें मिल जाती वे उसका अध्ययन करते थे। कभी-कभी तमसुक में कुछ वैसे भी मिल जाते थे जिसे वे कित्ताब खरीदनेमें व्यय करते। धीरे-धीरे उन्होंने कपड़ा बुनने का काम अच्छी तरहसे सीख लिया और १९ सालकी अवस्थाम उनका हियोगमन हो गया। गरीबोंके लिए उनके पिताने धीरे-धीरे परिवार-पोषण का भार भी उत्तर छोड़ दिया तथा स्वयं बुनाईमें मूक हो साहूकारी और बैद्यकी श्रम लगे।

इस प्रकार उनका जीवन-काम चल रहा था कि बरपामी स्कूलमें एक नए शिक्षक आए जिन्होंने संगारको परीक्षा देनेके लिए प्रेरित किया। इसलिए फिर उन्होंने स्कूलमें अपना नाम लिखवा लिया तथा बीस सालकी उम्रमें सम्बलपुर जाकर इम्तान दिया। शूँच उनकी कवि मनोवृत्ति भी फलतः उनके सब विषयोंमें अच्छे अंक मिले पर यथितमें कमकम रहे। इसलिए विशेषरूपसे सर्टिफिकेट न मिलकर बेगो-गाठमाका पास सर्टिफिकेट ही मिला। इसी सर्टिफिकेटने उनका भावी जीवनकी गति निर्धारित की तथा इमान बसवत अधिप्यमें उन्हें मोहरी मिली।

संगार अपने माता-पिताकी एक मात्र संलग्न थे इसलिए वे उनको जीकरक भिन्न नहीं अत्यन्त नहीं जाने देना चाहते थे। जब बरपामीके जमोदार नृपराजसिंहको उनकी वाप्यदाका परिचय मिला तो उन्होंने बही उन्हें अपनी जमीनारीमें एक अभाग को मीकरो दे दी। उनकी तनहाह मास कपण निर्धारण की गई, जो राजकीय अनुप्रसंगमायी जाती थी। परन्तु कुछ दिन काम करनेके बाद वह बन्द हो गई। वे कुछक

बनकर होनेके कारण अपने पेटेसे ही मुझपर करने लगे अफिम म्याम सबसे विचलित नहीं हुए। एक बार कनबाड़ नामक एक ग्राममें यनाधिकार प्रभुत्व जमानेके कारण बरपालीके जमीदार और मुख्तार के बिन्दू एक मुकदमा बायर हुआ। मुख्तारके आवे कहनेपर भी गंगाधरने साक्षी देनेके लिए साफ इतकार कर दिया। उनकी बात न मानकर मुख्तारने साक्षी करवा ही परन्तु उनकी सचार्थीकी मवाहीसे सबकी जमाना हुआ। अपनीकमें जमीदारकी तो रिट्टाई मिली लेकिन बाकी सबका जमाना काम्य रहा। इसपर जमीदार तो कुछ झुड़ हुए किन्तु मुख्तार बिन्दू नहीं उनका भाव पूर्वकत् रहा। फिर जमीदारी में बन्धोबस्तजा नाम एक हुआ और मुख्तारने उनकी जमीनका कार्य करनेके लिए बाध्य किया। उनकी सचार्थी देखकर बन्धोबस्तके बाद जमीदारने उनकी मास मुहूरिरके पदपर नियुक्त किया और धीरे धीरे जमार, बाजार आदि अनेक सिआबोंका कार्य भार उन्हें सौंपा। उनकी ठमकबाहू ७ से ५) ५ से १०) एवं १० से १२) तक कमरा बढ़ी। सन् १८९९ में बरपाली के बुद्धीसिधक मुहूरिरकी मृत्यु हो गई। जमीदारने गंगाधरजीके नामकी सिफारिश कर उस जगह उन्हें नियुक्त करवा दिया। जमान २) से लेकर ३३) तक वेधम बुद्धि हुई। इस नौकरीमें बरपालीमें करीब तीन साल रहे फिर ठमकबाहू होनेपर उन्हें सम्बलपुर बिन्देपुर और पद्मपुर भी जाना पड़ा। सन् १९१७ में पैगन केकर कुछ दिन पद्मपुरमें ही रहे। पद्मपुर (बुडा संबर)के जमीदारने अपनी राजप्रासीके तजवीक तैजापर नामक एक गाँव उन्हें जागीरके तजमें दिया था और उनकी स्मृति रजाके लिए एक नव स्थापित गाँवका नाम कंबिबरपुर रखा था। गंगाधरजी पद्मपुरमें रहते समय जमीदारी बहाभतमें अडिटरका काम भी करते थे। किन्तु नहीं रहना उनके मनकी न भाजा था वे अपनी जम्म-जूम बरपाली लौट जाना चाहते थे। बरपालीके परबर्ती जमीदारके अनुरोधसे वे बरपाली लौट आए और वही मास-मुहूरिर नियुक्त ही पए। लेकिन अत्याय अत्याचार और कुपचारके कुछ क्षुब्ध होकर उन्होंने नौकरी छोड़ दी। वे बिन्दोही ही उडे। आत्म-संयोजन उनकी बुद्धिमें बहुत बढ़ी थी। उन दिनोंके बामभडाके नाहित्य उचित गुमराही राजा लखिबानस्य नियुक्त करने प्रचुर धन और बुद्धि देनेका आवाधान देकर उन्हें बामभडामें रहनेके लिए नियमित किया। किन्तु उन्होंने अस्वीकार कर दिया। अब वे राजसेवाके अविनायी नहीं रह गए थे। क्या अवेजोसि बड़ा राजा कौन था? जब उस राजाकी सेवामें बैराग्य पैदा ही था था सब धुमरे राजाकी मजा के लिए इच्छा नहीं करते? इन दिनों उनका मन बहुत अजान्त था। आदर्शगारी तो वे ही। अपनी भुनिया पाठि की दूठ बुरी प्रबाधोंको दूर करनेके लिए उन्होंने एक महामन्त्राका संयोजन किया और उसमें मुख्तारकी कई प्रस्ताव पास कराए।

गंगाधरजीकी प्रथम पत्नीने ही सड़के और लड़कियाँ हुईं। बड़े सड़केकी अहापुमें ही मृत्यु हो गई। फिर सन् १९१७ में पत्नी की उन्हें छोड़कर चल गयी।

करीब एक साल बाद उनका दूसरा विवाह हुआ। वे अपने दूसरे सड़के भगवान मेहेरके किए विधेय चिन्तित रहते थे क्योंकि वे उसे न तो उच्च विद्या ही वे सके और न कोई जीवन-निर्वाह की व्यवस्था ही कर सके थे। वे उसे बहुत प्यार करते थे और हमेशा अपने पास ही रखते थे। आजकल उनका एक पीत भी विनोदचन्द्र मेहेर की ए इधर किमी अच्छी मौकरीपर है।

गंगाधरजीका जन्म एक धार्मिक परिवार में हुआ था। बचपनमें ही उनकी पढ़ाई शुरू हुई थी रासपञ्चाध्यायी भागवत तथा नारमस पीठासे। राम पञ्चाध्यायी भागवतका ही एक बंध है जिसमें योधियोंकी प्रकृतिका एक खेळ निदर्शन है। 'नारमस पीठा' शीतकृष्णशामकी किन्नी हुई है और उसमें श्रीकृष्णकी बाध-भीला योगरत्न और कुछ उपदेशात्मक कथाएँ बर्णित हैं। उनकी शिक्षामें प्राचीनता और नवीनताका सम्मिश्रण था। उनकी शिक्षाका प्रारम्भ प्राचीन पद्धतिकी पाठशालामें हुआ तदनन्तर वे धर्मी हुए आधुनिक पद्धतिके स्कूलमें। सन् १८८२ में स्कूल छोड़नेके बाद प्राचीन रीति काव्य 'काव्यबन्धनी' 'मुमता परिचय' 'रसिकहासकी' 'दीहीस विकास' 'रस कस्तूर' ने गंगाधरके बालकवि हृदयको अत्यन्त आलोकित किया। उनके कवि-जीवनमें इस विद्याका अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। इस प्रकार वे नूतन युगके राष्ट्रात्मके ऐतिहासिक जालमें भीने हुए सम्रिकालके कवि भी बहू पा सकते हैं। उन्होंने एक पग आधुनिक युगमें रखा लेकिन प्राचीन युगसे पुनर्जन्म विरग न हुए। उनकी प्राथमिक कविताओंमें ऐतिहासिकी छात्र स्पष्ट है जिसका हाना स्वाभाविक भी है। उनकी विधाके अनुसार उनका मामने शीतकृष्ण उपेन्द्र भस्म धारक थे। उनकी ऐतिहासिक अनुकरण कर उन्होंने रस रत्नाकर लिखा। यह काव्य उपा बभिकट-परक है। किन्तु एक बात ध्यान देने योग्य है कि ऐतिहासिकके अनुसरणपर लिखित होने पर भी रस रत्नाकर की भाषामें विषयवता नहीं है भाषा सरल और मधुर है।

रघुनाथ इन्दीवर नेत्र मनोहर ।
रसा सुता हृद बीचग्रीव-मुषाकर ॥
रतिपति बित छवि इयामथ कुम्भर ।
रसपीय विरो धेनि मुजे चाप धर ॥
रसकुल संहारये तब अबतार ।
रचित विपरीतजहु करि लक्ष्मिबर ॥
रस लभि जहुँ अबि रसपी निस्तार ।

इस कविताको हम्म-शीर्ष नियमसे पढ़ना चाहिए। कविने इसको प्रभावित कर एक प्रति राधानाथ रासके पास भजी। वे इस पत्रकर बहुत खुश हुए और उनकी प्रतिभा देखकर उन्हें बहुत प्रोत्साहन दिया।

अब कवि गमाधर द्वारा रामानाथ राय द्वारा प्रदत्त मार्गमें बधने लगे। उन्होंने रीतिमार्ग और संस्कृत छन्दोंकी छोड़कर सरल उड़िया छन्द अपनाए। उन्होंने पार्सल विच्छेदितकी बंगला भी में बरब रिया और छोटी-सी अक्षरलिखा छोड़कर फिरसे अस्वात्म्य लिखा। यह और भी हृद्यमग्राही हुआ। वत यह प्रगट है कि गमाधरने मायाकी दीक्षी बरब ही उसे और अधिक सरल बना दिया तथा उसमें नूतन भावोंका समावेश किया। उनपर रामानाथ रायके काव्योंका काफी प्रभाव पड़ा। उनका प्रथम काव्य है इन्दुमती। इन्दुमती पर रामानाथकी उपा की छाप स्पष्ट दिखाई देती है। उपा में जयलक्ष्मीके उपाके छाप कठोर दौड़को परीक्षण उत्तीर्ण होनेके बाद विशा-वेदीमें पाणिप्रह्व होठे ही बोनोकी मृत्यु होती है। सम्भोग शृंगारम बदन और विप्रसम्भ आठा है। धेरिन उपा और जयलक्ष्मीकी दौड़ भारतीय कविके विश्व है यह *Atlantis race* पर आधारित है। गंगाधरको इसकी रस योजना तो अच्छी लगी लेकिन कथावस्तु साधर नहीं खेती। इसलिए सिस्ती कथाधरने इन्दुमतीकी कथा चुनी। यह कथावस्तु कालिदासके रघुवध से भी गई है; परन्तु यह अनुवाद नहीं है। कवि अस्वात्म्य में कहते हैं —

सखरीर प्राय मे करे प्रदान
 तानु बन्धिवार माया
 निजे बीजापायि न यिजे त जावि
 तहिं जाहिं मोर जागा ?
 तजावि न कहि ह्य तहि रहि
 माहूकु या विज जल
 सेहिएरि दुह बारि कबर कहि
 हुतार्थ हैनि केरस

[जिस सबे पालितमानने मा-रीर प्राणीको प्रदान किया है उसकी बन्धना किस भाषामें की जाए ! यह साधर धरलक्ष्मी की न जानती जानी—बड़ी मेरी क्या गजना ? फिर भी इन दिष्टामें अपन-अपनी रचिके अनुबन्ध बहे बिना रहा भी तो नहीं जागा ! इसलिए मैं दो-चार बार बहकर कृतार्थ ही हुआ हूँ ।]

इन्दुमती काव्य मुक्त होता है विषय अक्षरक मतेन, बर्नमदे। स्वयम्बरम अक्षरा प्रवेश इन्दुमतीका प्रवेश रामानाथकी अक्षरा प्रमुनिता बधन अपने छन्द लिया गया है ।

गमाधरने रामानाथकी शृंगार कथाकाया विद्या कर्मन छोड़ दिया है और बरिदयकन रामानाथकी अक्षराका बर्नन करने हुए बर्न गई उपमाओंका संयोजन विद्या

है। उनकी उपमाओंमें कुछ पारम्परिक है और कुछ उनकी अपनी है। उन्हें अपने परिवारमें कुछ उपमाएँ आहरण कर उनका प्रयोग किया है।

इन्दुमती पङ्कज भी यथानाम राजने उनकी खूब प्रशंसा की। जिसमें उनका बहुत प्रशंसाहल मिला। इसके बाद उन्होंने उनका छंदमी प्रारम्भ किया। उनका लक्ष्मी म भी यथानामीय विचार धारा प्रतिपादित है। यथानामक द्वारा अपनी प्रशंसाके प्रति प्रशंसा है।

यथानाम रायक काशीम पृथी (कमार गीर्षी) चन्द्रभाषा कटक (मन्त्रि कैटवरी) काम्यवर (उवा) और काम्यमके कुछ 'यहनाम का स्थान दिया गया है मयाधरने परिचयी अन्वयके सम्बन्धपुर बाणागीर काम्यम आदिको भी स्थान दिया है इस काव्यके प्रथम अंशमें उल्लेखना पीरक गान किया गया है। उसके बाद चन्द्र और रोहिणी उनकाके मयूर मन्त्रमें रामचन्द्र मन्त्र और प्रभा ('उल्लेख प्रभा' मयूर मन्त्रम प्रकाशित एक मामिक परिवार) के अन्तमें देखा हुआ है। उनका पद्यम कुम्भारि मुकुन्द इसके अन्तमें और मुकुं यथानामक अन्तमें देखा हुआ। यथक मन्त्रम निजी प्राची भी मन्त्रोप ही उठने हैं। य मय उल्लेख लक्ष्मीकी पुत्रा कर्म है और पुत्राके लिए मान है। वे कर्म हैं—

बहु रथ पिला विहिवाहु सव
हेउपिलि तरवर,
छउ करि बेला मयल युगल
आनन्द लोचक मर,
ते मरे प्सावित हेला बजस्वल
प्राय हेला पुलकित
मने हेला तर्हि मयु नाक पाए
होइव अछि निमज्जित।

पद्यके उल्लेख लक्ष्मी मयूरी छत्री की अन्तमें इन मन्त्रमें प्रकाशित किया गया या आदरक उपमाएँ हैं। इसका अन्तमें मन्त्रना एक माधुर्य है मय कल्पना याव आनुर्य मुकुन्द है।

इसमें अधिक उपाहित हुआ मय उल्लेख कीचक अन्तमामक काव्य किया है। इसकी काव्यमयु महामारल के भी कई हैं। 'इन्दुमती' के ममान मय भी पुत्राभक्त को मूत्रन कर दिया गया है। और इसका मन्त्रम मन्त्रिवाएँ और मय पाए सम्पूर्ण भागीय है। 'कीचक' अथ की उल्लेखके अन्त मयाधरजी विजयपुरमें य। काशी यमीधर मन्त्रम मन्त्रिना अन्तमय मन्त्र और आधिपत्यम वे। किन्तु उनका चारि अन्तम पङ्क्तिना दुर्गापारा और लम्पन वे। एमी परिस्थितियोंमें सुख होकर

उन्होंने कीचक बध की रचना की। इसमें पाप-पुण्य धर्म-अधर्म का दृष्ट है तथा अन्तमें धर्मकी अधर्मपर और पुण्यकी पापपर विजय दिखाई गई है।

इस धर्ममें शूमार, रीर, भयानक हास्य आदि रसोंका समावेश किया गया है। इसमें असन्त वर्धन संघ्नाका वर्धन तथा मुम्बरियोंका याबा वर्धन आदि अत्यन्त मनोरम हुआ है। सन् १९०३ ई में 'कीचक बध की रचना की गई थी। इसके बाद बहुत दिनों तक वे चुपनी सना गए। 'कीचक बध' के मुम्बरत्वमें राजानाब लिखते हैं — गंगाधरका दुर्भाग्य कि वे उड़ीसामें पैदा हुए हैं। अत्यन्त सौन्दर्यो वासिनी प्रकृति देवी और प्रकृति देवीका यह पुरोहित जो वास्तवकाष्ठमें ध्याय और वास्मीकिका चिर सहचर था। उदरपुटिकी बटिका समस्याका समाधान उनके जीवनका प्रधान व्यवसाय बन गया था।" इससे मान्य होता है कि बाखिरप उनकी प्रथिना विकासकी एक प्रधान इकायत थी। सन् १९०८ ई में राजानाबकी मृत्यु हुई। तब तक उन्होंने कुछ नहीं लिखा था। ई सन् १९०९ की राजानाबकी श्राद्ध-समामें श्री ब्रजमोहन पन्था उनस्वित्त वे और वे उस परिवेशमें अभिभूत हो गए। उन्होंने गंगाधरके पास चिटठी लिखनेका निश्चय किया और उनके साथ सम्पर्क स्थापित किया। यह गंगाधरके कवि जीवनमें एक महत्वपूर्ण घटना है। बाखिरप राजाका पारिवारिक अग्रज और पुठपोदकका एकान्त अग्रजके रूप और नीरव यगाधरको उन्होंने मुबार किया। उनकी निरवल सेवनी चञ्चल हुई उनकी समस्त कृतिमेंके प्रकाशनका भार उन्होंने अपने ऊपर ले लिया। इसका फल हुआ अयोध्या दृश्य।

अयोध्या दृश्य में तीन सर्ग या दृश्य हैं —

- (१) रामचन्द्रका अभियेक प्रत्याग और वनबात।
- (२) पुत्र विरहमें कौसल्याकी अवस्था और
- (३) वनबाससे प्रत्यावर्तनके साथ भरत मिलन और राज्याभिषेक।

इसके सब दृश्य कवच रसपूर्ण हैं। त्रितीय दृश्यमें पुत्र-विरहित मातृ-दृश्यका एक अचछा भारतस्य रसपूर्ण चित्र किया गया है।

इसमें गंगाधरके अपने हृदयके भाव प्रकट हुए हैं। बाखिरपके कारण उन्हें वैदिक गुण नहीं मिला और साहित्य-सेवाके अभावसे वे मानसिक मुक्त भी नहीं प्राप्त कर सके। ऐसी परिस्थिति से ऊब गए। वे साहित्य-सेवा छोड़ देना चाहते थे किन्तु ब्रजमोहन पन्थाके आग्रहके कारण छोड़ नहीं सके। इसलिए अयोध्या दृश्यके बाद पद्मिनी काव्यमें हाथ लगाया। पन्थाकी से मान्य होता है कि ब्रजमोहन पन्था ने उनके पास राजस्थानका इतिहास भेजा था।

इन बार पुराण या संस्कृति-साहित्य कीद्वारा इतिहासके कथावस्तुकी और उनकी दृष्टि गई किन्तु नया नया जाए तो कीचक बध और पद्मिनी काव्यमें सत्यमय अन्तर् अन्तर् नहीं है। यद्यपि कलात्मक अन्तर् काव्य है! निश्चय ही

'कीचक बध' प्रतिभाकी विकसित अवस्था की दृष्टि और पद्मिनी निरिच्छ-
निरिच्छता की।

पद्मिनी काव्यमें ईष्य भविमान और विवशताकी ओर झुक सके हैं।

कीचक-बध का कीचक यहाँ असाहसी है। डीपरो है पद्मिनी और
बधना है सीता। इसमें भी धर्म और अधर्मका द्वन्द्व है। सीताकी अनेकों चेष्टाओं
पर भी विवशता और धर्मपरमपरा पद्मिनी अपने धर्मपर स्थिर रहती है। काव्य
अपूर्ण है किन्तु परिणति स्पष्ट है।

असाहसीके बारेमें केवली और मनकी उक्ति स्पष्ट प्रयुक्त हुई है। उनके
परवर्ती काव्योंमें इस धीमीका और अधिक विकास हुआ है। गंगाधरक राजशाही
मनने एक अच्छा चित्र उपस्थित किया है। हम देखते हैं कि उनकी प्रतिभा
धीरे-धीरे उन्मत्त हो रही थी। वे कहते हैं— मछेकर पाइकि के प्रतिभा
सक्ति अत्यन्त न पारै नह बसइसे मति।" इसलिए पद्मिनी की सृष्टिमें उनका
मन नहीं भरा और उन्होंने उसे अधूरा छोड़ दिया। उन्होंने और बड़ी सृष्टिकी
कल्पना की और उनकी दृष्टि कालिदासकी ओर गई। कालिदासकी श्रेष्ठ कृति
अभिरामसाकुन्तलम् है उन्होंने उसे हाथमें लिया। एक प्रतिभाघाती व्यक्ति
ही कालिदासकी कृति पर हाथ रखनेका साहस कर सकता है। यह निर्दोष
अनुवाद नहीं है।

कालिदासके सम्पूर्ण काव्य-सौन्दर्यका समावेश इसमें नहीं किया गया है।
उन्होंने और भी कहा है कि नाटक में वाचक-नायिकाओंके हृदयकी प्रथम चिन्ताएँ
विस्मृत रूपसे चित्रित नहीं हो पातीं उसीको दृष्टिमें रखकर उसके उद्दिष्ट काव्य
रूपमें लिखककी स्वतन्त्रता प्रयुक्त हुई है। नर्वाण कविके मतसे नाटकके कारण
कालिदास जिन विधानोंका विस्तृत विकास नहीं कर पाये उन्होंने काव्य होनेके
कारण उसका बृहत् विस्तार किया है। यह क्या है? यह है प्रणय। गंगाधरने
अपने काव्यका नाम रखा है प्रणय बल्लरी और सपोंका नाम रखा है— प्रणय
अंशुर, 'प्रणय पदपत्र' प्रणय प्रमूक प्रणय मीरम 'पुण्ये कीट' 'प्रणय फले'
'प्रणय छावा'। शकुन्तला नाटकके अन्त्य अंशोंकी अनेका प्रणयका अधिक विस्तार
किया गया है। इसमें कवि नन्द मुरारि परम्पराके अनुयायी हो गए हैं। मन
विशेष की उक्ति-अयुक्ति भी है। मन्त्र रूपका भी प्रयोग किया गया है किन्तु
इन सबमें वे अत्यन्त संवत हैं।

द्वितीय सर्गमें नवीन प्रणयानुराग राजाके मन और विवशताका द्वन्द्व और
शकुन्तलाकी मानसिक अवस्थाका विश्लेषण किया गया है जो तृतीय सर्गमें प्रणय
परिवेष्ट की सृष्टि करनेमें महायत्न होता है। इसमें राजा शकुन्तला और
नर्वाणोंका मित्रन आभाष उल्लोचन आदि अत्यन्त हृदयवाही हुए हैं।

मिस्त्री गयाधर जल कौशल से उड़ीयाकी भी इसमें से जाए है। दुप्य राक्षसोंका आक्रमण दूर करनेके लिए स्वयंमें गए थे। इस आक्रमणका कारण पा देव-अग्न्याग्नीने राक्षस कन्याका अपमान किया था। एक दिन अग्न्याग्नीके समुद्र-तट पर नीलाचक्रके नीचे छान्डि भद्रा तथा कामा मण्डि जावि देवकन्याएँ बूमती थीं राक्षसराज कन्या हिंसा नहीं आई और उनमें अफ़ड़ा हुआ। यह भी एक सुन्दर चित्र है।
दुप्यस्य और सङ्कुशलाका पुनर्मिलनका दुप्य भी बड़ा चमत्कारी की नाटकीय हुआ है। इसमें प्रकृति-वर्धन भी अपने अंगका है।

प्रथम बल्लरी से प्रथम या सम्भोग शृंगारका चित्र दिया गया है उसके बाद कवि को दृष्टि गई विप्रसम्म शृंगार या कवच रसकी ओर। 'उत्तरराम चरित' में मन्वभूतिने कहा है —

एकी रसः कवच एव निमित्तमेवाह,

मित्र पुत्रह् पुपयिबाधपते विवर्तति ।

इस रसके प्रकृष्टतम आत्मजन है विसर्जनके बाद राम और सीता। इसका कविका इमान जनकी ओर गया और तपस्विनी की रचना की। तपस्विनी' सीत ही है। ऐसा लक्षणा है कि इस नामकरणमें उनपर काकिवासका प्रभाव पड़ा था काकिवासने कहा है —

नृपस्य वर्धाभय पात्मनम् यत् त एव वर्धो मनुजा प्रणीतः ।

निर्वासितात्येवमतररथमर्धं तपरिवत्तामाम्यमवेक्षणीया ॥

नरपतिका वर्धाभय धर्म पात्मन ही मनु प्रणीत धर्म है। इसलिये निर्वासित होनेपर मुझे अन्य तपस्विनीकी समान देखना चाहिए। किन्तु काकिवासकी अपेक्षा तपस्विनी में मन्वभूतिका अधिक प्रभाव प्रतीत होता है। मन्वभूति सीताके सम्बन्धमें कहते हैं—

परिपाण्डु दुर्बल कपोल सुन्दरम्

बधती विलोक कवरीक माननम् ।

कवचस्य मूर्तिरवका शरीरिणी

विरहस्यवेध वनमेति जानती ।

पाण्डव और दुर्बल कपोली सुन्दर आननपर विलोक बधती पड़ी थी। इस रूपमें जानकी कवच रसकी मूर्ति या शरीरणी-विरह व्यथा-नी वनमें जाती है। तपस्विनी काव्य यहीमें शुरू होता है। लक्ष्मण हर्त सीताका विसर्जन सम्भार आदि पूर्व अंग छोड़ दिया गया है। केवल जानकी ही यहाँ रामका भी कवच रस कूट पराके समान शार्ङ्गीर्यके कारण अप्रकटित है और बनीमूत्र व्यथा बल्लुङ्ग है। जानकी इस कवच रसका रूप देना चाहे ता उद्देश्य है। यह कवच रस और संपन्न हुआ गया है। राम और सीता दोनोंके मानसिक अन्त प्रदर्शनके द्वारा पनि और रामा रामके जानमें समर्थ और आरम्भके मन्वभूतिमें आरम्भकी विषय हुई है। वे करते हैं—

प्रकृतिर घ्राप्ति-यज्ञरे नृपति
 मुक्षरि स्वभावे बलि ।
 बृह धर्मरामे बद्ध निज कामे
 पारैम पारह बलि ।

[प्रजाके घ्राप्ति यज्ञमें स्वभावतः राजाको सुखकी बलि देनी पड़ती है ।
 बृह धर्म रज्जुसे बद्ध राजा अपने कर्तव्य कर्मसे एक क्षण भी नहीं बल सकता ।]
 किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि सीताके प्रति रामका प्रेम बट गया ।
 अन्तर्मुख धन ध्येय राम कहते हैं —

नाहि सिता धरे, हृद-प्रेम सारे
 मो प्रिया कमल कसि ।
 पङ्क्तिवि फुटि मकरन्द लुरि,
 कवप्रति मन बलि ।
 मयल-मुगल कहिकि बिकल,
 होइ छाडु मछ जल ।
 मुनि मले सर, कमलिनी मोर
 होइ इव टल टल ।
 बस तु पसर, बंध होई कर,
 बद्ध नेत्र बल बाली ।
 नासिका पवन न बहिषु धन
 कपिब प्राण सञ्जालि ।

[राम रो भी नहीं पाते । रोनेसे मयल मार्गसे बल निष्कासित हो जाएगा
 सटौबर मुख जाएगा और कमलिनी सीता मुख जाएगी । राम हृदयको पत्थर कर
 नेत्रबल वालीको रोफते हैं । और जोरसे निस्वास भी नहीं लेते ताकि कमलिनी
 सीता कम्पित न हो जाए ।]

रामचन्द्रके इस प्रेम को सीता जानती थी इसलिये काकिदासने जो कहा है —

बाध्यस्त्वया भद्रवतास्त राजा बहू नी विमुञ्चामयि परसमक्षम ।
 मां लौकबाह बधमावहासी भुतरय कि तारसदां कुलस्य ॥

यह कवि गंगाधरकी वरुणाके बाहुर है । गंगाधरकी सीता रामकी
 बाध्य नहीं कह सकती । इसलिये उपस्थिती की भूमिधामें गंगाधर कहते
 हैं—उन्होंने (सीताके) निर्धामनको अपना माय्य-दोष बूझकर क्रिम प्रभार पति
 भक्ति की बड़गा और उच्यताका परिषय दिया है— बलवामकी पति-विन-साधिनी-

मधुर शरण करिब हरम
तो पाप मरम मरै जीवन ।
जननीय स्नेह आपार प्रथम
ब्रह्म ब्रह्म सबै नाम ।
जनक आरर एक एक सर,
तीइ रेनु छनि तापरे जीवन ।

[बिचक मधुमय है । मधुका शरणा पाप-मरमका मय दूर करता है । जननीका स्नेह आपाका प्रथम ब्रह्म जन और ब्रह्म जनका सग नाम पिताका आरर, प्रथेक एक-एक शरने है और न ताप दूर कर देते है ।]

इसमें मधु बाता है आनापते मधु अरन्ति सिद्धक का मधु उवाच स्वर है, ना ते कान्ता कल्पे पुत्र का मही । उनका रेश-श्रेम भी आररन कोटिका है वे उलठ भारती में करने है —

नाक बड़िचिते कर करतन,
रञ्जिबिज तहि अलता रंग ।

नाक बड़िचिते ताकले छरन
हेव नहि कि मो सीपठक भम ।

[नाकूल बड़ गया है तो उसे काटकर ब्रह्मनामे रंग देना चाहिए । नाक बड़ पर है तो उसे काट देनेसे क्या मरा मौपठक भम नहीं होगा ?]

आज भी यह बात सच्ची है । आज भावगत एकका धूमा उठा है । किन्तु उन्होंने 'मानुभूमि' कविता में कहा है कि बालक अपने घरसे बूसरोंके घर, घरसे पाड़ा पाड़ेसे ग्राम और ग्रामसे ग्रामान्तर जाता है—इस प्रकार पसना बाध बढ़ता ही जाता है —

एहिकसे ग्रामकवा राग्यकवा
वैराकवा विशकवा

नामक जीवने प्रजीत हेवार
बधित हुए सर्ववा ।

मनु-भूमि नातु-मावा रे भमता
या हूवे जनीम नाहि

तातु येवे जामि गजरे यमिवा
अज्ञान रहिबे नाहि ।

घामसे राज्य राज्यसे देघ देघसे बिबर-बोब मानव जीवनमें उत्पन्न होता है। मातृभूमि और मातृभाषाके प्रति जिसमें ममता पैदा नहीं हुई है उसे यदि जानियोंने गिना जाए तो अज्ञानी कहाँ रहेंगे? उनका ऐस प्रेम इस प्रकार का था।

सामाजिक अत्याचारोंको देखकर भी उनका हृदय रो उठता था। ब्रिटिश शासन कालमें शासकोंको धर्मविचार कहा जाता था। उनको लक्ष्य कर के कहते हैं —

मन धार ध्यस्त सदा पर स्वहृत्से
धन धार विदलित पबिका चरसे।
जीवन या लक्ष-लक्ष लोकद्वार भार,
ताडु मध्य बीति चान्ति धर्म अक्षतार।

इन पंक्तियोंमें छासकाका जो विश्व दिया गया है वह आज भी सत्य है। इसी सुरमे उन्होंने भारती भाषणा गाई है। इसमें गोपेन्द्रकी स्तुति है किन्तु द्रिष्ट्य अर्थमें पराधीन भारतकी अंग्रेजोंके प्रति उक्ति है।

वे सत्कारक मनोवृत्तिके से तथा पञ्चायल शासनके पक्षपाती। इसी मनोवृत्तिको केकर उन्होंने कृपक संकीर्ण किया था। इसकी कल्पना एक अमृतपूर्ण कल्पना है। बनिष्ठ की पबिकस कवितामें इस प्रकारकी कल्पना पाई जाती है। कृपक संकीर्णमें अन्न की महिमा कृषिवा गौरव कृपककी आत्मकथा भूमि विधाव और विभिन्न धस्योकी कृषि बनिष्ठ है। इसमें प्रमुखत छन्द छम्बलपुर अञ्चलमें प्रचलित हुकिया पीठ या किसान पीठ से लिया गया है। इसमें सरकारी भावना और बिबर पक्षपात भावनाके साथ-साथ कवित्व भी है। अन्न की महिमाका बयान करते हुए वे कहते हैं —

अन्न पाई तसिसे जीला करे हुस
बज्र भावे कौकिल अन्न करि धंसत।
अन्न पाई खेतरे फेल्ड छम्बल,
धहि देज मानस आमीद तहि रे
अछि अन्न हे।।

कृषिका गौरव' म सम्पठाके विकासमें कृषि की देन का अधिकृत बिबरण दिया गया है और कहा गया है —

कृषि तो बेहरे कृषि तो पुराण।
कृषि बिना रहि न बारह पराण।
कृषि येनि नृपति कृषि येनि तम्य
कृषि बने मायु भी सम्पद सकल
हुए तम्य हे।।

कृपक की आत्मकथा में एक भावार्थ कृपक का जीवन बिधा गया है। कृपक कहता है—

काम मोर खेतरे खेतरे बिधान
बिधाधिते एकान्ते पाये हरिनाम।
पान मोर उठिते खेत पक्षी माने
निखरै निखरते मो पान मुनाने
एक ध्यान हे ॥”

मोहो पान धामिते उठे ताछ पान
मधुमरी उठान्ति ए याहार तान
उते उते बिहारि खेति बुझि मोधे,
ईश्वरकु बिचित्र महिमा स्मरान्ति
मोर हृदय रे ॥

इस प्रकार संयाधर अपना कविताबोकी अमूर्त्य बाणी चीपकर सन् १९३४ में श्री अमावस्याक दिन परलोक निधारे। वे पूर्णिमाक दिन इस लोकमें आए थे और अमावस्याके दिन महासि सदाके लिए चले गए।

• • •

गंगाधर मेहरे

[काव्य-सम्बन्ध]

१, आश्रमे प्रभात

चतुर्थ सग

मंफले भइसा उवा बिकच-राबिबइसा
 जानकी-बसन-तुया-हुबये बहि,
 करपस्तबे नौहार मुक्ता घरि उपहार
 स्तोक बास-बाहार प्रांगणे रहि,
 कलकच्छ-कच्छे कहिसा,
 "बरसम बिम सती, राति पाहिसा ।" ॥१॥

अरुण कषाय बास, कुमुम कान्ति बिकाश,
 प्रशान्त कष्य, बिशवास बिमन्ति मने,
 केर्ते योगेश्वरी आसि मधुर भावे आशवासि
 बाहुछन्ति दुःखरासि-उपशमने,
 बेबा पाई नव जीवन
 स्वर्गु कि ओल्हाइछन्ति मर्त्यमुजन ॥२॥

समीर सगीत पाए, नमर बीषा बजाए
 सुरभि मस्तने पाए उवा निबेशे,
 कुम्मादुमा होइ भाट भारम्मिसा स्तब पाठ
 कळिग भइसा पाट मगध बेने,
 कळित मधुरे कहिसा,
 "उठ सती राग्य राभि, राति पाहिसा ।" ॥३॥

१ आश्रममें प्रमात

चतुर्थ सर्ग

प्रस्फुटित कमलके समान नत्रवाली मंगलमयी उषा जानकीके दशमकी अभिरूपा लेकर आई और करमें धवनम रूपी मोतियोंकी माला लेकर सीताके प्रांगणमें खड़ी होकर मधुर वाणीसे बोली—
“हे देवि ! भोर हो गया है उठो दर्शन दो।” ॥१॥

सूर्यकी अरुण किरणोंके साथ गेरुआ बस्त्र पहनकर उषा आई है, मानो सुन्दर गम्भीर रूप धारणकर कोई योगद्वारी ही सीताका दुख-बर्द दूर करनेके लिए स्वर्गसे अवतरित हुई है। वह आश्वासन देती हुई सबजीवन प्रदान करनेके लिए सीताको बुलाती है—॥२॥

उषाका आदेश पाकर समीर गीत गाने लगा भ्रमर बीणा बजाने लगे, सुरभि नाचने लगी। महोद्या भाटजा रूप धारणकर स्तवम पाठ करने लगा। धोष्ठ भाटके रूपमें कलिंग (स्यामा) आया और सन्नित बण्डसे बोला— हे राजरामो ! रात बीत गई, उठो। ॥३॥

मुनि-मुखे बेद-स्वन पुन कसा श्यामवन
 उठिसा भेदि गगन उच्च ओंकार
 बँकुष्ठे बेद सृपति अमस्त भुतिकि गति
 बिहिला कि सरस्वती घोषा झकार,
 बेलुबेल बन उम्बळ,
 मत्र बळे येन्हे बडि मासिसा बळ ॥४॥

एकाळे ब्रह्मचारिणी अमुकम्पा तपस्विनी
 मासि अनकनम्बिनो पावो गम्भीरे
 बोइसे, उठ बबेहि, उपा सुकुमारबेहो
 मासिछि बर्षेन बेद तोप बिघिरे,
 तमसा रहिछि अनाई
 कोळ करि करे सुख सभिबा पाई ॥५॥

पदिमी-बूद-शिशिर विभुरे खर रविमर
 प्रतिबिम्ब परि, बीर राम मूरति
 शोकजर्जरित बिल फळके करि बिप्रित
 हेस आसनु उरिषत जागकी सती,
 नमि अमुकम्पा पयरे
 बन्बिसे जयार पद सभिजयरे ॥६॥

बोइसे ताकु प्रशसि, "तुम्हे तिमिर बिप्यसि
 रबि-मायमन-शसि हुम संसारे,
 तुम्म कोमळ खरण करे ब्योति आहरण
 ताहि पावळि शरण बुड भागारे,
 शुभ्र सउरम रसिके,
 शुभ सम्पादिनी हुम रघुबंसिके । ॥७॥

मुनिके मुखसे मिःसूत वेद-मन्त्रकी मधुर ध्वनिसे सपन श्याम कानन गूँज उठा। ओंकारकी ध्वनि आकाशको भेदती हुई अन्तरिक्षकी ओर अपसर हो वैकुण्ठके निवासियोंको आनन्दित कर पाताशकी ओर अपसर हुई मानो यह सरस्वतीकी वीणाकी झंकार ही हो। मन्त्रके प्रभावसे जिस प्रकार तेज प्रकाशित होता है उसी प्रकार सूर्यके तेजसे वन प्रकाशमान हुआ। ॥४॥

इसी समय तपस्विनी अनुकम्पाने धनक-नन्दिनी आनकीके पास आकर कहा—“हे वैदेही! सुकुमारी उपा तुम्हारे द्वारपर खड़ी है उठी बरान दो। तुमको भी गोदमें लेकर सतोप पानेके लिए रास्ता दख रही है।” ॥५॥

कमरुपर पड़ी हुई शवनमकी बूँदों पर जैसे प्रखर किरणें प्रतिबिम्बित होती हैं उसी प्रकार वीर रामचन्द्रकी मूर्तिको शोकाकुल हृदय रूपी पटपर चित्रित कर सती आनकी आसनसे उठी। अनुकम्पाने प्रणाम करके बिनयके साथ उपाकी परण-मन्वना की ॥६॥

सीतामे उपाकी प्रशंसा करते हुए कहा—‘तुम अधकारको दूर करने वाली हो। तुम रविके आगमनका कारण हो। तुम्हारे बिन स्मिग्ध चरणोंका अनुसरण करती हुई ज्योति जाती है उन्हीं चरणोंकी दृढ़ आशा कर मैं तुम्हारी शरण जाती हूँ। हे सुभ्र-सीरम रसिके! तुम रघुबहाकी मंगलकारिणी बनो। ॥७॥

उत्सुक हृदये रात्रि-क्षेपरे व्याभ्रम-घात्री
 तमसा निर्मल-गात्री पवित्र-धारा
 प्रांगणे कुसुम बिम्बि सुवासित मोर सिधि
 मंगल-प्रदीप रवि प्रभाती तारा
 मृदुमृदु मीन-नयने
 चाहुँपिला सीता-सती शुभागमने ॥८॥

उठवु तापसकन्या-गणक आबर-बन्या
 प्लावने जगत-भस्या-सती एतल
 बाहारि भवगाहने अमुकम्पाक गहणे
 तमसा धार बहने कले गमम;
 सतीकि तमसा अकरे
 घेमि स्नेहे भासिमिसा तरग-करे ॥९॥

अमृत मधुर स्वरे भायिसा परितोपरे
 "भामा गो, मो मातसरे न बिला आशा
 करिब अके विहार राजलक्ष्मी-हृदहार
 सीता करि परिहार भोय-पिपासा
 भाग्यबती मोते संसारे
 बोसिबे तो ' योगु एका परसंसारे ॥१०॥

बने बने अमि अमि गण्ड कुटुके न अमि
 अठु बाघा अतिअमि स्वच्छ पीयने
 अन्धार बुद्ध न गणि मात्तोक सुख न मणि
 आलछि डूर सरणी मत बबने;
 अमम कबडि सफळ
 तोय-बाने तोपि तीरवासी-सकळ ॥११॥

निर्मलगात्री तमसा पवित्र धारा रूपी आँगनको सुगन्धित
 बरसे सींचकर फूल बिछाकर तथा तारोंका दीप जलाकर
 अपने मीन-नयनोंसे उत्सुकताके साथ तुम्हारे आगमनकी राह देख
 रही है ॥८॥

तापस कन्याओंके स्नेहमें डूबी, ससारमें खेच सती सीता अनुकम्पा
 आविके साथ तमसामें स्नान करनेके लिए झुटियासे निकलीं । अपने
 तरंग रूपी करोंसे तमसाने सतीका आलिंगन किया । ९॥

तमसाने मधुर वाणीसे कहा — 'मैं परम सम्पुष्ट हूँ ।
 हे बेटो ! मुझे स्वप्नमें भी यह आशा न थी कि राजछद्मी सीता
 सांसारिक भोग-विलासको छोड़कर जंगलमें आएँगी और मेरी
 गोदमें बिलौलें करेगी । केवल तुम्हारे कारण सारा ससार मुझे
 सौभाग्यवती मानगा ॥१०॥

जंगल-जंगल भ्रमण करती हुई जीवनमें नाना प्रकारक विघ्न-
 बाधाओंको सहन करती हुई, अघकारमें दुःख और प्रकाशमें सुख न मान-
 कर सतत स्वच्छ रूपसे विनम्र चली जा रही हूँ । सभी तट-वासियोंका
 पीक मिटाकर उनको पीतल करती हूँ ॥११॥

मम्बाकिली गोबाबरी से सब गुने मो ' सरि
 तपापि वर्धन करिछलि गौरव
 लभि तो पबित्र पद—धिन्ह अक्षय सम्पद
 बिबिपद-पद प्रद भग सौरभ
 ताहा पिला मोर बाँछित
 तबभाबे हेजबिलि मने साँछित ' ॥१२॥

सीता बोइले, “पनीर-मधुर ए स्वच्छ नीर
 नीर नुहें बननीर क्षीर प्रत्यक्षे,
 गिरि-स्तम्बु विनिस्तुत होइ आसुछि अमृत—
 धारा परि सीतामृतकम्पा सखे,
 ओहो तु त मो ' मा ए बेशे
 मो बुखे बिदीर्ण-बला तमसा बेशे ॥१३॥

छेइ भेबिअछि पृष्ठ से पाब हेजछि बुष्ट
 तपापि सुताकु तुष्ट करिबा पाई
 फिटाइ स्नेह-सोचन प्रीति-मधुर-बचन
 बिम्यासे चाटु रचन करु गेहहाइ,
 धम्य धन्य मा तो हृदय
 मो बुस आतप पाई बालुकामय ॥१४॥

[तपस्विनी से]

मन्वाकिनी, गोदावरी नदियाँ भरे ही समान हैं, किन्तु तुम्हारे पवित्र चरण-स्पर्शसे ही उनकी जीति बढ़ी थी। वे देवताओंके पद रजसे सुशोभित होती ही आई हैं। मेरी भी यही कामना थी और मैं इसके बिना अपनको तुच्छ मानती थी। ॥१२॥

सीतान कहा— यह नीर स्वच्छ सुवासित और मधुर है। यह नीर नहीं बल्कि जननीका क्षीर है। पर्वत रूपी स्तनसे प्रवाहित हुई यह अमृतमयी धारा सीताके लिए अमृतके समान है। अहो! तू तो इस प्रदेशमें मेरे दुःखसे विदीर्ण हृदयों माँके समान है ॥१३॥

(तुम्हारे) हृदयमें ऐसा छेद हुआ है कि वह तुम्हारी पीठके भार-भार भी दिखाई पड़ता है। स्यापि अपनी कन्याको सन्तुष्ट करनेके लिए स्नहमयी दृष्टिसे निहारते हुए प्रीतिपूर्ण मधुर वाणीसे मन बहलानेकी चेष्टा करती है। हे जनमि! तेरा हृदय घन्य है। जिसके कारण मेरा महान दुःख बाण-कण-सा प्रतीत होने लगा है।” ॥१४॥

२ सीताक विलाप

सप्तम सर्ग

भिक्षा बिअन्ते ष्ठे घरि मो कर
 बिमाने बसाइला नेइ सत्बर,
 कसि बिमय केते केते तर्जन,
 न कसा कर्षपात तहि कुर्जन मो ॥१॥

आणिनि बेश मुहे गुणर चिन्ह
 बाहारे साधुबेग, भितरे मिन्न ।
 मणलि लोके सबशुभद धम,
 के जाजे धर्म नाम बहइ धम गो ॥२॥

बसिण मुचे बल बाहिला रप
 कम्पाइ धनधोये गगनपथ
 काम्बिकि येते येते उच्च आरबे,
 बिलीम हेसा रप घोप-गरमे गो ॥३॥

रप शयबे भाया हेब बिकल
 जानि पकाइबेकि भूया सकल
 बेबिनि नदीमाने होइ बिकल
 शोण शरीरे येहे हेले निउचस गो ॥४॥

तनु संकोचि तुंग पादपचय
 भिङ्गिले परस्परे सनि ता' भय,
 मवनी कमे होइ गसा नीरब,
 रुचि रहिले मृग बिहग सब गो ॥५॥

९. सीताका विलाप

सप्तम सर्ग

[आश्रममें सीताका अतीतको स्मरण कर विलाप]

शिक्षा देते समय मुझ रावणने बलात् विमानमें सीधे बैठाया ।
मन कितनी ही अनुमय-बिनय की और घमकियाँ भी दीं, लेकिन उस
दुर्जन (रावण) ने ध्यान नहीं दिया ॥१॥

सब मन समझा कि वृद्धके अनुरूप गुण नहीं होता । सिर्फ
उसका ऊपरी बेदा ही साधुका है परन्तु भीतरसे वह सर्वथा भिन्न है ।
लोग घमको मंगलमय मानते हैं लेकिन वह बौन जानता है कि
यम भी घम कहलाता है ॥२॥

उस दुष्ट रावणने दक्षिणकी ओर आकाश मार्गका कल्पित करते
हुए और तेज गर्जन करते हुए रथ चलाया । मैं उच्च स्वरसे विलाप
करने लगी लेकिन वह रथ-ध्वनि-गर्भमें विलीन हो गया ॥३॥

रथ-ध्वनिमें मरी कठण ध्वनि बिफर हो जाएगी यह जानकर
मैं धीरे-धीरे सकल आभरण उतार कर फेंक दिए । मैंने देखा कि
नदियाँ बिकल होकर क्षीर्ण धारीर धारण कर मानो निश्चल
हो गई ॥४॥

भयभीत होकर घड़े-बद्ध बृश अपना धारीर संकुचित कर
आपसमें भिड़न लग । धीरे-धीरे पृथ्वी नीरव हो गई और पशु-पक्षी
सब भयभीत होकर छिप गए ॥५॥

पूब पदिबन माय्य ककुमन्नय
 कमे बिशिसा गाड नीलिनामय,
 मही लयाण किछि न हेसा बृष्ट,
 तहि मध्यकु रप बाहिना बुष्ट गो ॥६॥

अपे बिशिसा बिगमूल उज्ज्वल,
 कमे मणिलि ताकु बन-अनल,
 येतिकि हेसा रप ता पास पाश,
 अतंस्य ज्योतिपुञ्ज हेसा प्रकाश गो ॥७॥

भाबिलि मम तेबि तारा सकळ
 बिबसे छमि रहि बळकु बळ,
 बिधु बिरहे तेजि मभोमण्डळ
 हृदये बाळुछमि बिरहामळ गो ॥८॥

किबा मो मर्त्यसीळा होइछि क्षेप,
 शमनपुरे हेउमछि प्रवेश ?
 बेबिलि मनोहर अट्टाळीभेगी
 बिशमि रम्य हेम-कळस घेनि गो ॥९॥

बिशिसा कमे पुर-अट्टाळी बीबि,
 मगर रन्निछमि स्वर-बीघिति
 स्वरु हेम्य शिर कळसमान
 रपाधि कवछमि जाण्बस्यमाम गो ॥१०॥

सेकाळे मने मोर हसा बिचार,
 अट्ट योगी मिशे शमनचार,
 हृतास्त पास यिबि सबर्ये पशि
 उन्नाइ बीपत पति-भक्ति-असि गो ॥११॥

पूर्व, पश्चिम और दक्षिण-ये तीनों दिशाएँ प्रमदा घने अघकारमें बिलीन हो गईं। अघकारके कारण पृथ्वीपर कुछ भी दिखलाई नहीं पडा। ऐसे समयमें दुष्टने रच घसाया ॥६॥

सामने कुछ उज्ज्वल आभा दिखलाई दी जिसे मैंने दावानल ही समझा। रच जितना ही समीप जाने लगा उतनी ही उसकी तेजोमयी ज्योति प्रकाशित होने लगी ॥७॥

मैंने यह सोचा मानो उडुगण सब आकाश माग त्याग करके दिनामें झुब्ड के झुब्ड प्रकाशित हैं। मानो वे चन्द्रमाके विरहमें व्यथित होकर नम-मण्डल छोड़कर हृदयमें विरजानल जरा रहे हैं ॥८॥

अथवा मेरी सांसारिक मीला समाप्त हो चुकी है इस-लिए मैं मानो यमपुरमें प्रवेश कर रही हूँ। स्वर्ण कलश-युक्त सुन्दर दिखलाई पड़नेवाली बहुत सी हमारतें मैंने देखीं ॥९॥

मानो सूर्यने अपनी प्रखर किरणोंसे सोमेके उन बसशोंको मौबकर उज्ज्वल किया है ॥१०॥

उस समय मुझे एसा लगने लगा कि यह योगी निदण्य ही यमदूत है और मैं पति-भक्ति रूपी दीप्त लसवार ऊँची किए यमराजके सम्मुख सगब उपस्थित होनेवाली हूँ ॥११॥

ता परे रघुपति मोते भनाइ
 बोइसे स्नेहशून्य मेने अनाइ,
 “कुसंगु बळि नाहि अगते पाप,
 कुसंगी सगे मिळे घोर सन्ताप गो ॥१२॥

कामाग्र्य बानकर पाप-मबने
 पिसु, स्पर्श पिय पाप तो मने,
 न पारे करि आउ तोते प्रहृष्य
 प्रहृष्य कसे हेव लोकागर्हण ।” ॥१३॥

अळइ अळ कसे मोचे गमन
 आउ कि ताकु रचि पारइ घन ?
 अनळ शिखा परि अनळ बहि
 हेले से अळ उदरधर्मे घने मिशाइ गो ॥१४॥

भाबिलि, पिसि सिना घरि जीबन
 सेबिबि बोसि प्रभु पदमचरण,
 न हेबि यदि पदस्पर्श मानन,
 जीबने आउ मोर कि प्रयोजन गो ॥१५॥

बहिबि बेह चाहि चाहि श्रीमुख
 एरुं अधिक मोर कि अछि मुख ?
 इगय हेसे बेह अवश्य प्राण
 प्रभु श्रीअंगे याइ पाइव स्मान गो ॥१६॥

मो तनु बग्य हेले हेबत छार,
 ताहाकु कराइव पावपे सार
 से तरु काण्ड बेइ बबघनी हस्ते
 कराइ देव प्रभु पादुका मोते हे ॥१७॥

उसके बाद रामचन्द्रजीने मुझसे स्नेह रहित वृष्टिसे बुलाकर कहा— 'कुसगसे बढ़कर पाप संसारमें नहीं है और कुसगीके साथ रहनेके कारण बहुत दुःख झेलना पड़ता है ॥१२॥

तू कामान्ध राक्षसके पापपूर्ण भवनमें थी इसलिए पापने तेरे हृदयको स्पष्ट किया होगा अतः मैं तुझे ग्रहण नहीं कर सकता। यदि मैं तुझे ग्रहण करूँ तो यह सोगोके सामने बुरा मालूम होगा।' ॥१३॥

पानीकी धारा जब बावलसे अलग होकर नीचे गिर जाती है तब क्या बादल फिर उसे रक सकता है? यदि अग्नि सिखाके समान वह अपनेको बसाकर भस्म कर दे तो फिर वापस आकर वह बादलमें मिल सकती है। ॥१४॥

मैंने सोचा कि प्रभुके पद चरणकी सेवाकी आशामें ही मैंने जीवन धारण किया था। अब यदि चरण छूनेके अधिकारके योग्य भी नहीं हूँ तो इस जीवन धारणसे क्या प्रयोजन? ॥१५॥

धीचरणोंकी ओर देखती हुई मैं अपने शरीर को बसा दूंगी क्योंकि इससे बढ़कर मेरे लिए और क्या सुख है। शरीरके अल जानेसे यह प्राण अवश्य प्रभुके भीमंगमें स्थान प्राप्त कर सकेगा, अर्थात् मिलकर एक हो जाएगा ॥१६॥

मेरा शरीर दग्ध होकर अवश्य राख होगा और वृक्षोंमें चावके खपमें उपयोगी होगा। उस वृक्षकी लकड़ी (में स्थित मुझे) लेकर वहई जब अपने कौशलसे प्रभुके लिए पादुका बनाएगा उस समय भी मुझे प्रभुकी पद सेवाका सौभाग्य मिलेगा ही ॥१७॥

३ श्रीधर्म-वर्णन

अष्टम सर्ग

जीवने यतवन बड़िसा सम बसत बड़ि बने हेला प्रीयस,
 युवा शक्ति यथा हुए प्रकरा, प्रचण्डतर होइ आसिसा करे ।
 सुख विषय-भोगतुल्यार परि सञ्चार कसा मृगतुल्या सुन्दरी ।
 तुळा उड़िसा तेनि आळमळी तक, कृपण घन काळे जड़े जातक ।
 पछास मंगे नाहि पूब सुरंग अमिस्य एहिपरि सब-प्रसंग,
 तापे अधिकतर मस्की फुटिसा, अधिक बास तार अंगु सुटिसा ।
 साधु हूबप तापे हुए मटळ, बरञ्च हुए शान्ति-यश प्रबळ,
 कुटन अनाइला ताकु हरये, साधव पाइ साधु अबश्य रसे ।
 एक हूबये दुहुँ कसे विचार, प्रीयमें करुषिबा बास सञ्चार,
 बरया हेसे मही हेब शीतळ, शान्ति समिबे जीब जन्तु सकळ-
 कबन्ध नेतकी त बासकृपण, मुहुस्ति, करिबे से लोकतर्यण,
 अपण करि जन रञ्जाम भार तेनिबा हसि-हसि तक ससार ।
 उबच्च कमळिनी उम्बाइ मया सहये समर्पण करि से कषा
 बोइसा मुहि बाइ तुम्हर संगे आसिबि काळ-सिन्धु-तुंग-तरंगे ।

अष्टम सर्ग

[व्याधमका श्रीष्मकाजीन प्रवृत्ति-वर्णन]

जिस प्रकार जीवनमें यौवन बढ़ता है उसी प्रकार बसन्त बढ़ते-बढ़ते श्रीष्म रूपमें बदल गया । यौवन शक्ति जैसे तजमय होती है, उसी प्रकार प्रबन्ध घुप घघकने लगी । विषय-भागक सुखमें अतृप्तिके समान मृगतृष्णा रूपी मुन्दरी सञ्चरित हुई । सेमरकी दरई इस प्रकार उड़ती दिखती है, जिस प्रकार कजूसका घन मौकेपर तिजोरीसे उड़ता है । जिस प्रकार पलासके फूलका रंग अब वह नहीं रहा इसी प्रकार संसारकीसा रता भी अनित्य है । जिस प्रकार तेज घुप पाकर मोमरा अधिक फूलता है और अपनी भुगघ भायें खोर फैलाता है उसी प्रकार कण्ट पाकर साधुका हृदय भी दृढ़ होता है, जिससे उन्हें यदा और धाम्ति मिलती है । वसा फूलको देखकर प्रजमस्मिका आनन्दसे फूल उठती है उसी प्रकार साधुको देखकर साधु प्रसन्न होता है । दोनों मिलकर मह निदधय किया है कि हम दोनों समाम श्रीष्म ष्टु भर इसी प्रकार मुबास बितरण करती रहेंगे, तदनन्तर वपां होगी, पुष्पी दीतल होगी और संसारके सब जीव धाम्ति पाएँगे । कदम्ब और केवड़ा भी अपनी मुबासके लिए कजूस नहीं हैं । वे भी जन-जनका आनन्द दान करनेवाले हैं । जन मनके रञ्जन करनेका धार हमारे ऊपर है हम उसको पूरा कर वनस्पति जन्मसे मुक्त होंगे । कमसिनीने प्रसन्न हो सिर उठा कर समर्पन करते हुए कहा—मैं भी बाल-समुद्रकी ऊँची तरंगामें तुम सीपोंके साथ बूझूंगी ।

४. प्रणयांकुर

प्रथम सग

जय बेदध्यास जय कालिदास भारती-प्रिय-नन्दन
 तुम्हे ज्ञानगुरु कबिमण्डलिर सलाह-शोभि-बन्दन ।
 तुम्ह चरणरे सदाइछि बिधि मो हृद-दुह-बन्धन,
 तुम्ह पछे चाइ भारती चरणे बिनये करे बन्दन ।
 येउं पथे पमि भमिष्य गुरु हे, भारती-कुसुम-बने,
 सेहि पथे चालि तोछिबि कुसुम पड़िब येते नयने ।
 नयने पड़िब यतने यहिंकि न पाइब मोर हस्त,
 से उष्य जालर कुसुम घयने रहिबि होइ निरस्त ।
 मोछिला कुसुमे हार गुम्बि बैबि उल्लस-जगनी-हूबे,
 मस्तिरे जगनी-याद-पदमे पूजि मन मज्जाइबि मुहे ॥१॥

शकुन्तला जळा सिबि भारन्मिसे मब मसिकार मूळे,
 मधुकर एक उड़िला एकाळे ये यिला निमाळी फुसे ।
 उड़ि पुषि बसि बसे चारम्बार सुखरी मुसमण्डले,
 बिताइत हेसे उड़ि चाए पुषि मुहुर्मुहु उरध्वं तळे ।
 दोर्घ गुणु स्वरे केतेबेळे बरे करि निए प्रशमिण,
 यहिं याए तहिं चाए चपळार नयन पसकहीन ॥२॥

४ प्रणव्यांकुर



प्रथम सर्ग

हे भारतीयके प्रिय पुत्र कालिदास और वेदव्यास ! तुम्हारी जय हो । तुम बवियोंके ज्ञानघाता गुरु हो एब छलाटमें शोभित चन्दनके समान हो तुम्हारे चरणोंमे विद्यिने मेरे हृदयका दन्धन लगाया है । तुम्हारा अनुकरणकर मैं भी उसी भारतीयकी चरण-बन्धना दिनभके साथ कर रहा हूँ । हे गुरु आपने जिस मार्गसे भारतीयके पुष्पवनमें घ्रमण किया है, मैं भी उस मार्गपर चलूँगा तथा सामने आए हुए उन्हीं फूलोंको तोड़ूँगा जिन जिनपर मेरा हाथ पहुँच सकता है । जिनपर मेरा हाथ नहीं पहुँच सकता, यत्न करने पर भी उन ऊँची शाखाओंके पुष्पाके चयनसे मैं वञ्चितही रहूँगा । मैं उन तोड़े हुए पुष्पोंकी मात्ता गूँथकर अपनी उत्कल जननीके कक्षपर पहना दूँगा तथा शक्ति पूर्वक उसके चरण कमलोंमें अपने मनकी छीन कर हृषित होऊँगा ॥१॥

[सङ्कृतकाका आत्मम उद्यम चमत्]

एक बार सङ्कृतलाने मल्लिकाकी जड़में पानी डालना प्रारम्भ ही किया था कि उसी समय नव मल्लिका फूलोंपर बैठा हुआ भीरा उड़ते हुए सुन्दरीके मुखपर भा बैठा । वह बार-बार उड़ता है और उड़ता है और हटा बनेसे फिर उड़ जाता है और फिर नीचे भा जाता है । कभी-कभी दीर्घ गूँथनके साथ मेंडराने लगता है । फल-स्वरूप इस अवलाकी अपलक दृष्टि वह जहाँ-जहाँ जाता है, उसका अनुसरण करती है ॥२॥

कर प्राळि कई उठि मुक्ति बक्ष डेरि कदि प्रोवा भांगि,
 अळि तकि तकि नर्सकी भगिरे पक्षियाए चपळांगो ।
 ए नृत्य बदान धाम्य सभिबाकु केहि त न पिले कति,
 सुरांगना नृत्य नीरस मगस्ते वेणुबिसे सुरपति ।
 रुग्जा बिरहित स्वार्थ बिजडित बिबशा-बनिता-नाट,
 सारस्य-शोभित सास्य केजे काहिं बेखिपान्ति सुरराट ?
 न पारिसे बेखि अश्विनो-अमय-बळचित्त बिबस्वान
 यन-यस्तबित-तद-अन्तराळ रसा कला तांक मान
 केबळ हस्तिना-सार्वभौम धाहिं होइगळे स्तम्भीभूत,
 अवि न याइ या पवि कळे हब ए बचा एका भबभूत ।
 अघोरे सुन्दरी सक्ती कि अकिस्ता—“ मास-आस प्राणमित
 से गम्भीर बाणो होइगला सेहि सास्य-सहचर-गीत ।
 बनू प्रतिध्वनी उठि हेला सेहि रम्य-स्वर-सहचरी,
 अम्रभ्युत-सुधा-मोहन मध्य कि मग्निरेला हर-अरि ।
 सजाइपिला वा बोणा काम-अधु बजाइरेला शकार,
 हजाइले राजा धइम्य-मणि ता कुसुम-अनु-उकार ॥३॥

[अमय अश्वरी से]

वह हाथ हिलाती है निहारती है गदन घुमाती है, कमर मुकाती है अतः उस घोरिको हटानेकी चेष्टामें नृत्य भावों और मुद्राओंका सञ्चार हो जाता है। इस नृत्यको देखकर अपनेको सौभाग्यवान मानने-वाला वहाँ कोई नहीं था। देव-बालाओंके नृत्यको नीरस मानकर इन्द्र भी इसे देख रहे थे। सुर-बालाओंके नृत्य लज्जास्पद तथा स्वार्थ पूर्ण ही जो ठहरे, इन्द्रने कभी इस प्रकार सरलतासे सुशोभित नृत्य देखा था? कल्पकी प्रणय प्रणालीको सूर्यने भी नहीं देखा, क्योंकि सघन पत्तनोंकी छायासे सूर्यको छिपाकर उसके सम्मानकी रक्षा की। सिर्फ हस्तिनापुरके महाराज इसे देखकर स्तब्ध हो गए। आश्चर्य है कि उन्होंने अपने हृदयको कठोर कैसे बना लिया। जब व्याकुल होकर सुन्दरीने सहैस्त्रियोंको पुकारा हे सखियो भावो-भावो। उस समय उसकी वाणी नृत्यकी सहचरी संगीत बन गई। वही ध्वनि वनमें गूँज उठी और स्वरकी साधिनी बनी। ऐसा प्रतीत होने लगा मानो कामदेवने चन्द्रसे सुधा माकर उसे सुधा-मंत्रसे मन्त्रित किया हो तथा रति द्वारा सजाए धीणाके सारोंको किसोने छू लिया हो। इस प्रकारको कामदेवके पुष्प धनुषकी टंकार समझकर राजा धर्म च्युत हो गए ॥३॥

५. प्रणय पङ्क्तयः

द्वितीय सर्ग

हृदय गलाह बिवेक सोड़िका अग-सम्मिळम-यय,
 उभा होइ मन बोइसा, 'बिवेक पूरिछि तो मनोरय ।
 प्रत्यक्ष देखिछु होइ पाइअछि करे कर सम्मिळम,
 कर समपणे बुझिछु अमत्त म पिळा बाळार मन ।
 मनरे सम्मति पिबा बिययरे प्रमाण यद्यपि चार्हुं,
 कुसबक कटा सगाइ चार्हिंसा, कह कि करस्ता आठ ?
 बोलिबु अबा तु बाळिकार मन अघोन अटे पितार,
 बाळिका नुहें से युबती, ता मने नार्हि पितृ-अधिकार ।
 स्वाधीम युबती स्वाधोन मनरे करिछि कर अर्पण,
 साक्षी सखीइय, साक्षी ता हृदय साक्षी पाख साखीमण ।

बिवेक—“सेहि स्वेच्छाचार शुनि मुनिबर हुमन्ति यद्यपि कुट ?

मन—“अर तप शील मुनिक बिवेक नुहें कि तोठं प्रबुट ?”

बिवेक—“से कर अयने हुळहुळि काहि डळा होइ नार्हि पाणि’ ,

मन—“सारिका-बबने हुळहुळि बेसे सह्ये प्रहृतिराजी ।
 जाणि म पारिनु, सिक्त होइयिका रमणी-हृत्त-कमळ,
 स्वेद या माणिसु निबे कुसुमपर दाळियिसे पूत अळ ।”

५. प्रणम्य पहलव

द्वितीय सर्ग

[दुष्पान्तके हृदयमें इन्द्र]

हृदय जो ज्ञानसे विवेक दैहिक मिलनकी राह खूँड़ने लगा । उस समय मनमें उपस्थित होकर कहा—हे विवेक तेरी इच्छा पूर्ण हुई । हाथोंमें हाथ मिला हुआ है यह प्रत्यक्ष विद्य रखा है । हाथ अपना करते समय तूने यह समझा कि वह माराज नहीं थी और सम्मतिके लिए यदि प्रमाण चाहता है तो क्रुद्धकने (साड़ीमें) काँटे उलझा मुँह फेरकर देखा है । अब बताओ वह और क्या कर सकती है । तू यह कह सकता है कि कन्याका मन पिताके अधीन है । लेकिन वह युवती है वास्तिका नहीं । युवतीके मनपर पिताका अधिकार नहीं रहता । इस स्वाधीन युवतीने स्वाधीन भावसे, हस्त-अर्पण किया है । इसकी साक्षी देनेवाली हैं दो सहैलियाँ, उसका अपना हृदय तथा आस-पासके वृक्ष और लताएँ ।

विवेक—‘इस स्वेच्छाचार कर्मको सुनकर यदि महर्षि क्रुद्ध होंगे तो ?’

मन—चिर तपस्वी मुनिका हृदय क्या तुझसे अधिक विश्वास नहीं है ?’

विवेक—उस कर वचनमें न उलू ध्वनि की गई, न जलार्थ्य ही दिया गया था ?’

मन—‘प्रकृति देवीने मैनाके मुखसे प्रसन्नताकी उलू ध्वनि की है । क्या तू नहीं जान पाया कि रमणीका कर-कमल सीसा था, जिसे घायल तूने पसीना माना ! पर वह स्वयं ब्रह्माके द्वारा बाला गया पवित्र जल है ।’

कवि-श्री माला—

विबेक—'हिज त न विसे किए उच्चारिसा बेब मग्न भाबि कया ?'

मन— बसन्त कोकिल उन्हे भापुधिसा, 'भीरामस्य सीता यया' "

विबेक— 'स्वच्छन्दे अबल्य कर परिवार गुह्रें कि बसात्कार ?'

मन— 'प्रथये पुषती कर याबि बेबा सम्मति माहि कज्जार ।
प्रणय-राम्यरे प्रथयिर बल प्रथयिनी साइ पाए
घन संघर्षण व्यतीत बिद्युत कोलकु तार न याए ।'

विबेक— 'घनबले येबे प्रीति बिद्युतर गजन काहि कि भीम ?'

मन— गजन कि ताहा जगते बाजइ बम्पति प्रेम-द्विष्टिम ?
हृदय वोइसा " मुं यहि याइछि तहि कि न पले अंग,
बियम बिरह-बिये होइयिब जीवनर सुखभग ।

['प्रथय बल्करी

विवेक— वहाँ तो कोई ब्राह्मण नहीं था, वेद मंत्र आदिका उच्चारण किसने किया ?

मन— बसन्त कोकिलने मानो ऊँचे स्वरोंमें मंत्रोंका पाठ किया—
धीरुमस्य सीता यथा ।

विवेक—‘सहज ही किन्ती अबलाका हाथ पकड़ना क्या बलात्कार नहीं है ?’

मन—‘प्रणय कालमें युवतीको हाथ देनेमें सज्जा नहीं है । प्रेमके राज्यमें प्रेमिका प्रेमीकी सभ्य शक्तिको बूँडती रहती है । यदि बादलोंमें संघर्ष न हो तो बिजली उसके अंकमें नहीं दिखलाई पड़ती ।’

विवेक— मेघ और दामिनीमें अगर प्रीति है तो गर्जन क्यों ?’

मन— यह भीम गर्जन नहीं है—ससारमें यह प्रीतिकी छिप्टिम है । हृदयने कहा— मैं वहाँ जा रहा हूँ जहाँ धरीरका सहयोग न होनेसे बिरह स्त्री विपसे जीवनकी सरसता नष्ट हो जाएगी ।’



६ प्रणय प्रसून

तृतीय सग

प्रियम्बदा हसि अनसूया प्रति बोइला, पाउ तो' हार,
 मूं याहा आप्पइ गाइलि, तु एबे गाउ कि ना एक बार ?
 अनसूया हसि बोइला, 'तो गीत, परि मुहेंड मो' गीत,
 मूं गीत गाइले पराण बेबता होइयिबे उपनीत ॥१॥

हार मोहिचिले कि बेइ पूजिब शकुन्तला प्राणेइबरे ?"
 शकुन्तला बिल आनेचिसा, भुति न यिला तीक भापरे ।
 प्रियम्बदा ताहा जाणि शकुन्तला-केश सजाइबा छळे
 पुष्य आमरणे मण्डिबेला तार केश कज कजछळे ॥२॥

अनसूया एजे भवसर पाइ पूर्ण करिबेला हार,
 प्रियम्बदा पूजि बोइला, "सजनि गाअ एबे एक बार ।'
 अनसूया सने बसि हसि करि सजनीक साबधान,
 "बेइ आसियिबे पराण-बेबता, बोलि मारम्मिसा गान ॥३॥

भूत पक्क हेले कोकिळ मारसइ भापइ मधुर भापा,
 पुष्य पक्क हेले परराय बेबता पुरख करमि भापा ।
 निमळ पगने जग्ग यिले सिना दिगमि कर-इपणे,
 निर्मळ पीरति कात होइयिसे पाशकु आसमि जने ॥४॥

मुजन प्रकृति सभइ बिहृति दुणा माहि काळे काळे,
 से कया अग्यया हेबार ग्यबस्या अदि कि मो सखी माले ?
 रत्न-परीक्षक रतन पाइले बेइ कि पारइ छाडि ?
 बिकशित फुल हस्तरे पडिसे के बेइछि पदे माडि ? ॥५॥

तृतीय सग

[राधा बुप्पनके स्वायतकी कल्पना]

प्रियम्बदाने हँसकर अनसूयासे कहा— अपनी माया रख दे । मुझे जो मालूम था मैंने गाया अब तू भी एक बार गा । अनसूयाने हँस कर कहा— मेरा गीत तेरे जैसा नहीं है । अभी मेरे गीत गानेसे प्राण-देवता उपस्थित हो जाएँगे ॥१॥

मायाके बिना क्या अर्पितकर सकुन्तला प्राण-देवकी पूजा करेगी ? सकुन्तलाका ध्यान दूसरी ओर था इसलिए उसने यह बातलाप नहीं सुना । प्रियम्बदा यह जानकर सकुन्तलाके केश सँवारने लगी तथा कौण्डसे फूलोंके आभरणों द्वारा उनका केश विन्यास किया ॥२॥

इस अवसरपर अनसूयामे माया पूरी कर ली । प्रियम्बदान फिर कहा— 'हे सहली अब तो एक बार गाओ । अनसूयाने हँसत हुए बैठकर सखीको सावधान कर दिया और कहा— देखो प्राण-देवता आ जाएँगे ! यह कहकर उसने गाना प्रारम्भ कर दिया ॥३॥

आमके पक्ष जानेसे कोमल आती है और मधुर स्वरसे गाती है । इसी प्रकार पुष्पक पक्ष जानपर प्राण-देवता आ कर अभिलाषा पूर्ण करते हैं । जिस प्रकार हाथमें धर हुए आइनमें निमल आकाशका पद्म दिखाई पड़ता है उसी प्रकार पृथ्वी प्रीति प्राप्त होनेपर छाग पास आते हैं ॥४॥

मुजनोंकी प्रकृतिका विद्वत् ज्ञाना कभी मुना नहीं गया । लक्ष्मि क्या इस उक्तिका विपरीत ज्ञाना मेरी सखीके भ्राम्यमें है ? रत्न प्राप्त होनेपर जीहरी क्या उसे छोड़ सकता है ? विकसित फूलक प्राप्त होनेपर क्या कोई उसपरसे बुचलता है ? ॥५॥

रसमा विद्वत् न चित्से ममूत काहाकु लागिछि पिता ?
 या ' कया लभित्से विद्वत्क वल्करी होइयाए पल्लवित्ता ।
 भास मो' सखीर पराज-बेबता, काहिकि रुचिछ हूबे ?
 सम्मुखरे धरे बिराजित हुअ मो सखी पुनिब मुबे ।" ॥६॥

'यान विम रछि प्रियम्बदा सखी बोइला परिहासरे,
 'विद्वुत बेगरे आसिलेनि नृप तो बबुर्द-बर स्वरे ।
 'आसिलेनि नृप सबरे बमकि शकुन्तला बेभा चाहि,
 निकुञ्ज कुआरे जमा होइछन्ति प्राणप्रिय मरसाई ॥७॥

[प्रथम वल्करी से]



जिस अमृतके प्राप्त होनेसे क्षुष्क बल्करी भी पस्करवित्त हो जाती है, वह अमृत बिना रसनाकी विकृतिके क्या कभी किसीको कटु रुग सकता है? हे मेरी सबीके प्राण-देवता! आओ हृदयमें क्यों छिपे हो? एक वार सामने आओ सम्मुख आनेपर मेरी सबी तुम्हारी पूजा करेगी ॥६॥

प्रियम्बदान हँसकर कहा—‘गाना वन्द करो तुम्हारा मेढक-सा स्वर सुन कर ‘महाराज आ गए हैं। महाराज आ गए हैं’ यह सुनकर शक्रन्तलाने चौंकर देखा, निकुञ्ज द्वार पर प्राण प्रिय राजा खड़े ह ॥७॥



प्रणय सौरभ

चतुर्थं सर्गं

एकाले मुनीग्र आसि स्नेहवृष्टि बेइ शकुन्तला प्रति,
 बिचारिले मने शकुन्तलाहीन हेव मो बन सम्प्रति ।
 से बिचारे हूब बिजोमित होइ गजा मुनिबरंकर,
 मूषल-मूषसी गज प्रवेशिले येतने कमळाकर ।
 हूब माखोलने नयनपुगळे बल हेका डल डल,
 बिकम्पित सरे स्वत आसियाए कलज-बलकु बल ।
 सेहि काले यदि कथा कहिषान्ते भधु याइषाम्ता बहि,
 पान्थतरु बेहे पब फिटियले पान्थ कि पारइ रहि ?
 समय पाइले बीबने प्रवृत्ति फुटि पड़िबाए आसि
 प्रवृत्ति बजित के भछि अगते कि गृही कि बनबासी ? ॥१॥

बसि मुनि पासे सुताकु बसाइ क्षणे स्थिर करि मन
 तस्मिहे बोइसे "माजा पो, तु आजि गमिबु पति सबम ।
 धिबु तपोबने श्वास्तिर भबने सखी सगे खेळि रगे,
 पणिबु एभर सम्पत्ति-ससिष्ठ-संसार सिन्धु-तरंगे ।
 नाथ बिना केहि सागरे पसिले समइ घोर बिपद,
 ससार-सागर पाई महापोत एकमात्र स्वामि-पद ।
 नारीमानकर स्वामीदि ईबर स्वामिक धरम स्वग,
 लहमो सदा पतिप्रसार सगिनी स्वामि-श्रीति-अपवर्ग ।
 स्वामी गुरु स्वामी परम बाण्यब स्वामि-सेवा नारीधर्म,
 स्वामि-पदे भक्ति अर्चनारे मति अपि तु करिबु बन्म ॥२॥

चतुर्थ सर्ग

[मुनिजी शकुन्तलाको उपदेश]

इसी समय महर्षिने आकर स्नेहपूर्ण दृष्टिसे शकुन्तलाको देखकर, मनमें विचार किया कि शीघ्र ही यह वन शकुन्तला विहीन हो जाएगा। इस विचारसे महर्षिके हृदयमें हलचल मच गई। मृगालके छोटी हाथीके कमल वनमें प्रवेश करनेसे जिस प्रकार हलचल मच जाती है, ठीक उसी प्रकार हृदयमें हलचल मचनेके कारण मुनिजी आँखोंमें पानी छलकने लगा। जिस प्रकार घञ्जल तालावमें कमलके पत्तोंपर पानी अपने आप पहुँचता है, उसी प्रकार वातपीत करते-करते अमायास ही उनकी आँखोंसे अश्रु-धार बहने लगी। जिस प्रकार मार्गमें सड़ आ जानेसे पथिक रुक नहीं सकता उसी प्रकार समय आनेपर जीवनमें प्रवृत्तिका विकास होता है। गृहस्थ और वनवासी दोनों ही इस संसारकी प्रवृत्तिसे अलग नहीं हो पाते हैं ॥१॥

महर्षिने मनको स्थिरकर कन्याका पास बैठाया और स्नेहपूर्ण भावसे कहा— मेरी बेटी आज तू पतिके घर जाएगी। आज तक तू शान्त उपोवनमें सहेलियोंके साथ खेलती थी। अब तुझे सम्पदापूर्ण संसार रूपी सागरमें प्रवेश करना होगा। यदि कोई बिना नावके सागरमें प्रवेश कर लो तो घोर विपत्तिमें पड़ जाता है। संसार रूपी सागरको पार करनेके लिए स्वामी-पद ही एकमात्र महा नौका है। स्वामी ही नारीका ईश्वर माना जाता है और स्वामी-पद नारीके लिए स्वर्गके समान है। सखी हमेशा पतिव्रताके साथ रहती है और स्वामी-प्रेमसे अपवर्गका सुख मिश्रता है। स्वामी चोष्ठ गुरु और मित्र होता है। स्वामीकी सेवा करना नारीका धर्म है इसलिए स्वामीके चरणोंमें ध्याम अर्पित कर भक्तिपूर्वक अपना नाम करना ॥२॥

कवि-श्री माता

स्वामी या कहिये हुक्कर हेलेहे पाळने हेबु तत्पर,
 घरे या बारिब माज तहि केबे हेबु माहि अपसर ।
 दुख पिले मने दूर करिबु ता स्वामिबरशन मात्र,
 परिहास कले तांकु न मयिबु प्रति-परिहास-पात्र ।
 स्वामिक भोजन परे तु मुम्बिबु शोइबु शयन परे,
 स्वामिकर झय्या तेजिबा मूर्ख उदुबिबु प्रत्युपरे ।
 अकसर बेबु माहि तो नेत्रकु पर पुस निरीअने,
 सोबर हेलेहे निजने निकटे रहि बेबु माहि मने ।
 स्वामी येबे रोप करिबे अकबा करिबे यबि मर्त्सना,
 से बोप न घेनि मत शिरे सहि करिबु तांक अकबांना ॥३॥

निज करे रान्धि निजे बेजबिबु पतिकि भन व्यञ्जन,
 भोजन समये पासे उमा होइ बालिबु घरि व्यञ्जन ।
 स्वामि-सेवा काय्ये नारी प्रतिनिधि कबापि करिबु माहि,
 बिना बेतमर परिचारिकाकु घरे बेबु घउडाइ ।
 स्वामी तो अकनो-भार वहिछन्ति तो निरे तांक चरण,
 नेते शैर्य तोहो पाई प्रयोजन रजिबु सबा स्मरण ।
 बास भूषणर गर्ब न करिबु मबा तहि पाई अळि,
 पाहा बेबे तोये सन्तोये घेनिबु जापिबु ताहा तो मळि ।
 शाशुळ चरण सेबुधिबु निति गृहर बेबता मणि,
 शाशुटि स्वामिर पूजा सिहासन सब सम्पबर बनि ॥४॥

नगम मळिरे केबे न बळिबु अघिके करिबु स्नेह,
 बिमना हेले से कोळकु मायिबु माउंसि ता मुब बेह ।
 माउ येते पुर-नारी पिजे तांकु करिबु नगिनी जान
 से कया कबापि न करिबु यहि हेब तांक अपमान ।
 गुरुजन केहि पाणकु मासिले उठिबु तेजि आसन,
 अकबासन बेइ बनि सजिनये करिबु मुडु भाषण ।
 उक्य हास केबे न करिबु पुनि न करिबु उपहास,
 परिहास छळे करिबु ताहिदि सखोजन मान हास ।
 निजे परिपकृत पाइ निज गृह रजिबिबु परिष्कार,
 परिजनकर दुख गुणुधिबु कल्पिबु प्रतीकार ॥५॥

स्वामीकी आज्ञा बठिन होनेपर भी तू उसे तत्परतासे पालन करना । एकाक्ष वार यदि माराज भी हो जाएँ तो उसपर कभी ध्यान न देना । स्वामीको देखते ही हृदयकी बेदनाकी भूस जाना और परिहास करनेपर भी उन्हें परिहासके योग्य न समझना । स्वामीके भोजन करनेके पश्चात् तू भोजन करना और शयन करनेके याद ही घोना । सुबह स्वामीके बिस्तर छोड़नेसे पहले ही तुझे उठ जाना चाहिए । अन्य पुरुषोंको देखनेके लिए कभी अपनी आँखोंको अबसर न देना तथा समे-सहोदरोंको भी एकान्तमें पास रखनेका अवसर न देना । स्वामी यदि रुठ जाएँ या मिन्या करें, तो भी उनसे नाराज न होकर उसे सहन करना और उनकी अर्चना करना ॥३॥

अपने हाथसे भोजन बनाकर स्वयं ही स्वामीको खिलाना और खाते समय पास रह कर पखा झरना । स्वामीकी परिचर्याके लिए कभी भी दूसरी नारीको नियुक्त न करना तथा बेतन-हीन परिचारिकाको घरसे भगा देना । तेरे स्वामी बिनहोने सारी पृथ्वीका भार ग्रहण किया है, उन्हींके चरण तेरे सिरपर हैं इसलिये स्मरण रखना कि तुझे अत्यधिक धैर्यकी आवश्यकता है । वस्त्राभूषणकी याचना तथा उनपर गर्व न करना जो भी दें उसे अपने उपयुक्त समझकर प्रसन्नताके साथ ग्रहण करना । गृह-शेवता मानकर रोज सासकी चरण-सेवा करना । सास ही स्वामीकी पूजा सिंहासनका और सर्व सम्पदाओंकी खान है ॥४॥

नमस्के हठ करनेपर न खीसना बल्कि अधिक स्नेह करना । माराज होनेपर हाथ-मुख सहला कर उसे गोदमें ले लेना । और भी बितनी परिचित नारियाँ हों उन्हें भी बहन-सी मानना । जिससे उनका अपमान हो एसा काम कभी भी न करना । वड़ोंको आते हुए देख उनके सम्मानाथ आसन छोड़ देना और उनका उच्चासन देकर उनके बिनयके साथ मधुर सम्भाषण करना । कभी अट्टहास न करना और कभी किसीका उपहास भी न करना । परिहासमें भी कभी किसी सहैलीका अपमान न करना । स्वयं स्वच्छ रह कर अपने घर-बारको भी स्वच्छ रखना । परिजनोंका दुःख मृगना और उसका निवारण करना ॥५॥

अमाहृत होइ आसि केहि तोर अयथा प्रपत्ता कसे,
 जानिबिबु तार आगमन तीते ठकिबाहु कउसले ।
 स्वामी होय, श्रेय ब्रह्माइबाहु तो बणिब आसि ये मारी,
 ता कथा बिपम बिप मणिपिछु से एका तोर भगारि ।
 एते दिन याए मणिपिछु प्रिय सम्पत्ति तो तपोवन,
 एपर मनिबु मखिल-अबनी हेसा तोर प्रियघन ।
 तपोवन-मही-रुह-गत स्नेह महीरे करिबु म्यस्त,
 भृग-भृगी-गत ममता करिबु मानव-समाज गत ।
 स्वामी तोर श्रुति स्वरूप मखिल करिछन्ति राग्याधम,
 से आधम-नीति रक्षणे निजर जीवन करिबु सम । ' ॥६॥

[प्रथम वस्तुती से]

यदि कोई विना मुझाए आकर तुम्हारी प्रशंसा करे, तो उसका आगमन तेरे लिए हानिकारक ही होगा—ऐसा मानना। स्वामीपर श्रुति होनेके लिए यदि कोई नारी तेरे सामने उनका दोष-वर्जन करे, तो उसकी बातको जहर-सा मानना और उसे धरि-सी समझना। सुने आज तक इस तपोवनको अपना प्रिय धन माना था लेकिन आजसे तू सारे ससारको अपना प्रिय धन मानेगी। तेरा वह स्नेह जो अब तक तपोवनके वृक्षोंको प्राप्त था, अब उसे समस्त विश्वपर न्यौछाबर करना होगा और मृग-मृगीको ही जानेवाली ममताको सारे मानव समाजको देना होगा। तेरे स्वामी राज्याश्रमकी रक्षामें अपिके समान हैं, तुझे उस आश्रमकी नीतिकी रक्षाके लिए अपने जीवनको योग्य बनाना होगा ॥६॥

८ प्रणव फल

पष्ठ सग

शिशिर-सबने जम्मिला मखन मनोहर स्वबस्त,
 ता बेछि शिशिर आनन्दे मधीर हेला येम्हे उनमत्त ।
 स्पूळ उर्ण-वास बाछि-बाछि बेसा पेड़ि सकळकु बान,
 सुपक्व पोधूम-राक्षि बाने कसा बात्रभोजि समाघाम ।
 इजु-बण्ड-मान जण्ड-जण्ड करि ओपिला केवार-गर्भे,
 कुसुम-कुसुम-रञ्जित बसम पाइसे रसिक सर्वे ।
 द्विये-द्विगे बेला हरिद्वारञ्जित मधुमय गुम पत्र,
 आतप तापित जने बितरिसा सख सख आतपत्र,
 गगनधारिकि बैबापाई पत्र नेसा जक-वबमान,
 करिनेसा पय घूळि-बिरचित भँउरी-जम्ब-सोपान ।
 निर्वासित पद्य-सबुकु भाषिसा हूवे होइ बयायुक्त,
 पीतबिकम्पित प्रभातकु कसा कुजसटिका-कारामुक्त ।
 रात्रि भोयुयिका सुवीर्य समय हसम्ती वहन बण्ड
 क्षमा करि ताकु पुरस्कार बेला जम्बिका-पीयुष-जण्ड ।
 दिगगतामाने हटि हटि नेले पातळ-पाटळ-पाद,
 बिर-ज्योति-सोनी ज्योतिज्क-मण्डळ जूर कले ज्योति-हाट ।
 सुनारी जर्जुर रहिले सुबण-हार संयज्जे ज्यस्त,
 जग्रातप पाई शब्दमळिण्य हेले महोरात्र सुचि हस्त ।

षष्ठ सर्ग

[भरतके जन्मपर प्रकृतिका भाग्य]

विशिर कालमें बनमें सुन्दर रूपवान पुत्रन जन्म लिया उसे देखकर विशिरक हृदयमें अत्यन्त आनन्दका प्रादुर्भाव हुआ। मानो ऊनी कपड सम्भूकोंको दान कर दिए गए (रस्त्र दिए गए)। पके हुए गहूँसे बाह्यभोजन बगया गया गन्नेकी टुकड़-टुकड़े कर खतोंमें बोया गया। रसिक शोणोंको नाना फूलाके रगाके वस्त्र-दान स्वरूप मिले। सूत्र कर गिरे हुए पीसे पत्ते मानो मिमत्रण सकर चारा दिशाओंकी ओर चले और धूपसे तपे शोणोंका ताप हरनेके लिए साइ-यत्र दान किए गए। और बवडर (बाल्याश्रु) न गगनचारियोंका दानके लिए पत्र लिया। एसा रगन लगा मानो बबडरने आकाश तक जायके लिए धूसका एक खम्भा ही निर्मित कर लिया हो। कुम्हसाए हुए कमलाको मानो दयार्द्र हो लौटा साया। धीतकालीन प्रभातको कुहरके वधनस मुकठ किया। सम्भी रात मानो अंगीठीको सेकर दण्ड भाग रही थी उसे क्षमा कर, अश्रिका रूपी अमृतका उसे दान किया। दिग् वधुओंने हठ करके लाल भीने वस्त्र लिए, चिर ज्यातिकामी तारा-गण हाटसे ज्याति हरण करके सुनारी* और खजूर, सोनेका हार गूँपनमें ब्यस्त हैं। सेमर बृन्द सुन्दर खँदोबा सगानेके लिए करमें सूई र प्रस्तुत है।

* सुनारी—एक वृत्त विशेष इनमें महजनके तीन लम्ब फल लगन हैं और बीच रगके बहुत मुकापम फूल फूलने ह।

९. उत्कल लक्ष्मी

अथ गो उत्कल-लक्ष्मी एकमात्र सुन्दरी तु बसुधारे,
 प्राकृतिक शोभा-राशि रहितस्ति तो भगरे एकामारे ।
 तोहो बास पाई मछि केते तुंग सुन्दर झंळ शिबिर,
 बुदयबय मार बर्भनाकरणे प्रकति नाहि कबिर ।
 प्रिय मृग मृगी बुलुछन्ति तोर तम्बु तळ भूमिसण्डे,
 बुसुछन्ति मत्त मतगजयूष शानदारिप्लुतगण्डे ।
 तो बिहार पाई स्थाने-स्थाने केते रम्य उपवनमान,
 बिविध सुबास फुले पुर्ण होइ रहिमछि बिद्यमान ॥१॥

काहि गिरितळ निबिड कानन तो पाळित जम्बुपत्र,
 अति प्रमोदरे बळ बळ होइ कदछन्ति बिचरण ।
 काहि घेनु पस नव बुर्बावळ-श्यामळ धरणी बसे,
 अरि अरि पुण्ड-चामर बाळन्ति एका तोहो सेवा सस ।
 काहि कुमुमित स्ताबोळिमान होइमछि सुसज्जित,
 तोते बोळाइबा पाई बिहगमे बसि गाउछन्ति गीत ।
 काहि सुशोतळ पबळ उपळ होइछि परकपित,
 पस्तद-ध्वजन अरि तरुण अडदिने इण्डापित ।
 बिलिका अशुपा भटन्ति परा तो प्रिय केळिसरोबर,
 तहि मध्ये केते केते गिरि केळि-मण्डप अति सुन्दर ॥२॥

२. उत्कल लक्ष्मी

हे उत्कल लक्ष्मी ! विश्वकी एकमात्र सुन्दरी ! ! तेरी अय हो ! ! !
 एक ही साथ प्रकृतिकी शोभाशक्तिमें तेरी गोव पूर्ण है । ऊँच-ऊँच
 पर्वतोंके ये शिविर, तेरे निवासके कारण कितने भले लगने लगे हैं,
 जिसके सौन्दर्यका वर्णन करनेमें कवि भी असमर्थ है । प्रिय पशुगण तेरी
 भूमिपर विचरण कर रहे हैं । दाम-बारिसे भीगे हुए कपोलवाले
 मतवाले हाथियोंके समूह भूम रहे हैं । तेरे बिहारके लिए जगह-जगहपर
 रमणीय पुष्प-वाटिकाएँ हैं जो विविध सुगन्ध युक्त फूलोंसे भरी
 हुई विद्यमान हैं ॥१॥

पर्वतोंके पास बने जगलोंमें तेरे पालनू पशु मुग्ध-के-मुग्ध प्रसन्न
 होकर भूम रहे हैं । कहीं गायें खेतोंसे गव दूर्वा खाकर प्रसन्नताके साथ
 तेरे लिए पूँछको चँबर-सी बुझा रही हैं और कहीं फूलोंसे लदी
 सत्ताओंके बने हुए झूले सुशोभित हो रहे हैं । तुझे सुमानेके लिए
 पक्षीगण बैठ कर गीत गा रहे हैं । कहीं-कहीं सफेद पत्थरकी चट्टानें विछी
 हुई हैं, जो पलंग सी प्रतीत होती हैं । पसे रूपी पत्थे धारण किए
 बृक्ष चारों दिशाओंमें खड़े हैं । 'बिलिका' और 'अंगुपा' तेरे लीला-सरोवर
 हैं और कहीं-कहीं बीजमें पहाड़ोंने सुन्दर मण्डप-से ढाल रखे हैं ॥२॥

१ बिलिका—पुरी जिलेमें स्थित एक शीत ।

२ अंगुपा—बटक जिलेकी एक शीत ।

प्रिय सहचरी प्रकृतिसुन्दरी होइ भति सावधान,
 स्वाने-स्वाने तोहो पाई योइअछि केते अळंकारमान ।
 प्रधानपाटरे सम्पादि योइछि उज्ज्वळ रत्न सोमस्त,
 लोकमुखे यार सुन्दरिमा कया व्यापिछि बिगबिगस्त ।
 केमस्त कौशळे गोधूळि मस्तके कापखण्डे बेइ अचि,
 सोलागि योइछि 'गुम्बह,' गर्भे बिष्य मयामनि सञ्चि ।
 यर्ब कर्ब हेब तारामानकर बीपतिकि चाहिसे यार,
 समुद्र पुळिन योइअछि बेअ सोलागि मुकुताहार ।
 सो हुबे बिराजे गङ्गात बेअ उज्ज्वळ पदक हार,
 मुपति अमिज-रतन अचिते प्रभा बिकाशुछि तार ॥१॥

तोहो रूपे मुग्ध होइ जगभाष छाडि बधाराबती पुर,
 काळिअभातव बिपिनबिहार सुख करि मनु कूर
 पुर्बाअळ चूळे बिममनि प्राये बिजेकरि मोळाअळे
 प्रेने भासिगन ककछमि तोते प्रकाअड बाहुपुगळे ।
 काशीपाम छाडि आसि बिजोवन रहिसे एकाअबने,
 तिनि लोचनहु लुप्त ककछमि तो भय्य रूप बर्सने ।
 से बिश्वपावन बिश्वनाथकर गमनहु अनुसरि
 आह्वी आसिसे कइतब बेसे बिजोअपळा नाम धरि ॥४॥

पधे बेचि तांहु 'समसाई' बेबी भाबे भासिगन बने,
 समसाई कर सागि हबहार छिडि पड़िगला तळे ।
 सेहिठारे भूमि होइला गमीर बेबी जोजि जोजि हार,
 अमित-बालुका राशि पड़ि यहि होइअछि स्तुपाकार ।
 एबे हीराकुब नामे अभिहित होइअछि तोहि स्वान,
 केते हीरा तहुँ पाइ तो कुमरे होइअछि धनवान ॥५॥

तेरो प्रिय सखी प्रकृति सुन्दरीने यही सावधानीसे तरे लिए जगह-जगह कितने ही असकारोंको रखा है, प्रधानपाटमें उज्ज्वल रत्न सीमन्त सँजोकर रखा है जिसकी सुन्दरता लोगोंके द्वारा धारों ओर फली है। कौशसे गोधूलीके सलाटपर काँचके टुकड़में खचित कर, तरे लिए गुमदह के गर्भमें माषामणि हिफाजतस रखा है। समुद्रके तटपर तरे लिए मुक्ता माला रखी हुई है जिसकी कांति धाराको भी लजाती है। देवीय राज्य सुम्हार कण्ठहारके समान सुशोभित है, रत्नोंके समान राजाओंसे उसकी घोषा बढ़ रही है ॥३॥

तरे सौन्दर्यसे मुख हो श्रीजगन्नाथ द्वारकापुरी छोड़कर और काशिनदी तटके वनमें विहार करनेके आनन्दको त्यागकर, पूर्व दिगामें सूर्यके समान नीलाचल धाममें विराजित हो बिचाल बाहु फैलाकर तुझे प्यारसे आस्नियन करते हैं। त्रिलोचन शिव काशी धाम छोड़कर तरे एकाम्र वनमें रहते हैं। जहाँ तरे सौन्दर्यस उनकी तीनो आँखें प्रसन्नता प्राप्त करतीं हैं। इस बिदकके मगम्भारी शिष्या अनुसरण कर जाह्लाबी भी गुप्त बेपमें चिन्तोत्पत्ता नाम धारण कर आई हैं ॥४॥

राहमें समझाई दबी ने उसे देखकर प्यारसे गल समा लिया। दबीके हाथोंसे गलेकी मुक्तामाला टूट कर नीचे बिखर गई। वहाँ हारकी खोज करनेके कारण भूमि गम्भीर हो गई और खोनी हुई बासू जमकर पहाड़क समान हो गई। आजकल यह स्थान हीराकृष्णके नामसे प्रसिद्ध है। वहाँसे हीरा प्राप्तकर न जाने कितन लोग धनवान हुए हैं! ॥५॥

मने-मने कैसे मुं बोइसि, धम्य-धम्य गो उत्कळ मात ।
 सर्व बेबबेबी हेउछसि तोर बिशळ कोळरे जात ।
 एणु बिभबने बोलुयासि परा सर्व तीर्य घेनि हरि
 पतितपावन-क्ये रहिछसि नीळाचळे बिने करि ।
 एणु भार्य कवि कहियाइछसि “कळौ चित्रोत्पळा गया,”
 श्वेत तरंगिणी गुपते होइछि मंजुळ इयामतरगा ।
 सहसा बिशिसा बिराट मूरति बिरासित सन्मुखरे,
 राजराजेश्वरी बेझे रपपद गवा पदम कम्बु करे ॥६॥

सुनीळ बिबकण चरमकम्बित कुठिळ कुस्तळ कासि
 जन्माचछि मने बोचिबिदोमित सरितपतिर ग्यासि ।
 अमल्लिष्ट घाह रचित किरीट बिनाजित मस्तकरे,
 किए न कहिब मुकुट गडिछि बिशबकर्मा निज करे ।
 किरीट घोभाकु शोभित कर्णछि कर्णभूया मस्कीकडि,
 मस्कीकडि तट चुम्बने कुस्तळ घोभाहि याइछि बडि ।
 बस करे बंग भूयण तैलंगी-भूयण बसिजेतरे,
 चरचभुगळे सरिया भूयण शोभा सम्पादन करे ॥७॥

तरंगिणीगण नृत्य आरम्भसे मनोहर बेश घरि
 बिबिघ भूयणे बिभूवित होइ कुसुमे साजि कयरी ।
 हीरकमण्डित-बेणी चित्रोत्पळा तहि यिसा अग्रगण्या,
 अमरमुयने मलकोमण्डळे उर्बशी येसन घण्या ।
 ता पछकु यिसा ब्राह्मणी सुबज-कुसुमरे मण्डि धूळ,
 नृत्यमोळे यणु न यिसा धुळव लमुयिसा स्वण फूल ।
 तिहूमुमि राज-उदयान कुसुम रचित सुरम्य हार
 उरे मण्डि ‘बेब’ बोइसि सहित संघे नाचुयिसा तार ॥८॥

मेरे मनने वारम्बार कहा है—हे उत्कल-जननी । तू धन्य है । तेरी ही पवित्र गोश्रमें सब देवी देवताओंने जन्म लिया है इसीलिए मानी लाम कहते हैं कि तमाम तीर्थोंको साथ लेकर पवित्र पावन रूप धारण करके हरि नीलाचलमें बिराजमान है । इसलिए आर्य ऋषिने कहा है कलियुगमें चित्रोत्पला ही गंगा है । श्वेत तर्गिणीने अपनी मञ्जुल ध्याम तरंगका गुप्त रत्ना है । सहसा एक बिराट मूर्ति सम्मुख आई जा चारों घाम (भुवनेश्वर, याज्ञपुर काणार्क और पुरी) में म्याप्त है ॥६॥

इसके सम्ब वालोंका सौन्दर्य सागरका ध्रम करता है । मस्तकपर गगनचुम्बी मुकुट सुगोभित है । इसका देखकर बौन नहीं कहेगा कि विद्वकर्मनि इसे स्वय अपने हाथोंसे निमाण किया है । मागरकी कसियां किराटके सौन्दर्यको दुगुना कर देती है मागरकी कल्लास एगकर पूर्ण कुन्तल सौन्दर्यको और बढ़ा रहा है । दक्षिणमें बगलका अलकार सुगोभित है और बाईं धार तैल्लाका छरिया चरणोंकी गोमा बढ़ा रहा है ॥७॥

तरंगे मनोहर बेदा धारणकर तथा मिश्र-मिश्र अलंकारोंसे सुसज्जित हा फूलोंकी बहरी सजाकर नाचन मगीं । सुरपुरमें उर्बधीक समान हीरोंके आभूषणोंमें कवरी सजाई हुई चित्रोत्पला नदियोंमें धेष्ठ है । उसका पीछ सानक फूलोंसे कश-रागिका सजाए हुए प्राहाणी थी । वह नृत्तमें इस प्रकार मग्न थी कि गिरत हुए फूलोंपर उसका ध्यान नहीं था । सिंहभूमिके राजोद्यानकी पुष्पमाला गलमें पहनकर 'देव' और 'काइलि' भी उसका साथ नाचती थीं ॥८॥

गात्रयिले मधु-स्वरे मधुमय बेबम्यास गीताबळी,
 कोइलि मस्तके घ्राह्यापी शिखरी बेठयिले पुष्याम्बळि ।
 तिह् मूपकर स्वर्ण-शरिमय शुभ्र कौत्सिध्वज थरि
 स्वर्णमयी स्वप्न रेखा मासियिका घेनि बहु सहसरो ।
 बतरणी रम्य कानन कुसुम करियिका आमरण,
 वास सोभे ताहु भृगुके बेडि पिले बेबबेबीगम ।
 भार्गवी बिस्वा हया रत्नचिरा भाबि तरंगिणीभेषी
 चम्या छुरिभना पुन्नाग बिबिध पुष्ये मच्छिबिसै बेणी ॥१॥

वे वेदव्यासकी गीतावलीका मधुर स्वरसे गा रहीं थीं और 'ब्राह्मणी' कोयलके मस्तक पर फूलोंकी अञ्जलि दे रही थी। सिंह महाराजकी कीर्ति-पताका धारण कर तथा सखियोंको साथ लेकर स्वर्णमयी स्वपरेखा आई थी। वतरीणी सुन्दर फूलोंके आभरण पहनकर आई। इसलिये सुगन्धके लोभस सुरगण उसे घोंवरके समान घेरे हुए थे। भार्गवी, बिरूपा, दया, रत्नचिरा आदि नदियोंने चम्पक छुरिअना और पुन्नागकी मासासे बवरी सजाई थी ॥९॥

१० चन्द्र-रजनी

पुणिमा प्रबोये पूर्णचन्द्र आगमन
 चाहिं तरतरे सत्र रजनी रमणी ।
 ससाटे घेनिसा क्षुभ्र उम्बळ रतन,
 कणयुगे ध्रुवायस्य मनोहर मणि ।
 रंगाधरे मग्बहास करि परकास
 बेसाइला सुबिमळ प्रसन्न बदन
 हृष्ट पुष्ट कळेबरे उम्बळि आकाश,
 चन्द्रहिं कोमळ करे कळे आसिगल ।
 मधुरे मधूर मिशि हेसा मधुमय,
 ए योग मिळइ हेसे सौभाग्य समय ॥१॥

से दोभारे उस्ससिता पापाण हृदय,
 कळासये उस्ससिता कुमुद कानन
 घराधरे उस्ससिता भोयमिनिचय
 गगने उस्सासमय बकोर गायन ।
 जनपदे पुरे-पुरे प्रबोप उस्सास
 उस्ससित देवाळय दासयष्टा स्वने
 हृदये-हृदये महाउस्सास बिकास,
 उस्सासे छेळन्ति ठाबे-ठाबे गिम्भुगणे ।
 उस्सास नेइछि करि बिशब भयिकार,
 प्रबळर थापियत्य सबत स्वीकार ॥२॥

१० चन्द्र-रजनी

•••••

पुणिमाकी रातमें पूर्णचन्द्रके आगमनको देखकर रजनी रूपी नारीने क्षीघ्र ही अपना श्रृंगार कर लिया । ललाटमें शुक रूपी उज्ज्वल मणि और कानोंमें ध्रुव और अगस्त्य दोनोंको पहन लिया । इस तरह लालझोठोंमें मस्य मुस्कान फैलाकर प्रसन्न चित होकर प्रकाशित हुई । और पुष्ट शरीरसे आकाशको उवभासित कर चन्द्रमाने कोमल हाथोंसे उसका आच्छिन्न किया । मधुरके साथ मधुर द्रव्य मिलाकर मधुमय बन गया । ऐसा संयोग सौभाग्यसे ही मिलता है ॥१॥

ऐसी धोभासे पत्थरका हृदय भी उस्लासित हो उठा । जला धर्योंमें कुमुदवन प्रस्फुटित हो गए । पृथ्वीपर लुत्ताएँ उस्लासित हो गई । आकाशका उस्लास चकोरके गीतसे फैल गया । नगरमें और घर घरमें प्रदीप्त उस्लासका प्रकाश छा गया । संख और षण्टोंकी ध्वनिसे मन्दिरोंकी प्रसन्नता प्रगट होने लगी । प्रत्येक हृदयमें असीम उस्लासका प्रावुर्भाव होने लगा । जगह-जगह आनन्द-सागरमें गोते लगात बालक-बृन्द क्रीडा-कौतुक करने लगे । सारे विश्वपर उस्लासका साम्राज्य छा गया है । बलवानका आधिपत्य सर्वत्र स्वीकार होता है ॥२॥

सप्तश्रुति रक्षनीर मधुर मूरती
 बरदान पाइ चाहिंह बसिषास्ति पय,
 साबरे करस्ति भावय मंगळ भारती,
 ज्वरीची हस्तरे साजि प्रबोप सपत ।
 सानरे लुचाइ मुख चाहिंह अकम्धति,
 मन्त्र-मन्त्र हसि कक्यास्ति जयहास,
 रजभोकि बोरुपान्ति घम्यरे पुबती,
 स्वर्णोय मुनीश्वरगम हेले तोर वास
 तु काळकपिपी काळी मोहिमु जगत
 मानव बानव, बेव सय तो भकत ॥३॥

[कविता अन्तोळ से]

सप्तऋषि (तारा गण) रात्रिकी सुन्दर मूर्तिका दर्शन करनेके लिए रास्ता देख रहे हैं। ऐसा प्रतीत होता है मानो उत्तर दिशामें रात्रिकी मंगल आरतीके लिए सात प्रदीप सजे हों। रुग्णासे मुख छिपाए अरुंधती मुस्कराती हुई, उपहास करती हुई कहती है—हे रजनी, तू बड़ी चौधाम्पशास्त्रिणी है। स्वर्गके देवतागण भी तेरे पास हैं। तूने काल रूपिणी कालीके समान ससारको बशमें कर लिया। मानव, वानव और देव—सभी तेरे भक्त और पुजारी हैं ॥३॥

११ अमृतमय

नव	बिकसित	फुल	गन्ध,
नव	सरस	कविता	छन्द,
बन	बिहग	मधुर	तान
शिद्यु	सरळ	तरळ	गान
नव	प्रफुल्ल	कमळ	कामन
नव	सुकुमार	भिशु	भानन

अमृतमय अमृतरय भसाइ नेउछि जीबन ॥१॥

धीर	बळित	घोतळ	बात,
चिर	सळित	कुमुवनाब	
झीर	भवळ	चम्रिकाजाल,	
मीरबानबल		घनमळ	
मधु	मधुर	आसोक	उपार,
नवपस्त्रपतित		तुपार	

अमृतमय अमृतरय मरजाइ बेउछि ससार ॥२॥

मिठिमिठि	जकजक	तारा
टपटप	जळघर	घारा
तम	नाशने	घाबित धुणि,
तममुबत	अबमी	हुण्टि,
पिरिगरम	प्रसूत	निर्भर,
भूर	सम्फित	प्रपात

अमृतमय अमृतरय जीवन कइछि जजर ॥३॥

मुं त अमृत सागर बिन्दु,
 नभे उठिपिसि तेजि सिग्गु
 उंसि मिगिठि अमृत थारे,
 गति कइछि से अरूपारे,
 पये दुधिगले पाप तापरे
 होइ निशिर लसिबि ता परे,

अमृतमय अमृतरय सहित मिनिबि सागरे ॥४॥

११ अमृतमय

नव प्रस्फुटित फूलोंकी मुगन्ध नवीन और सरस कविताका छन्द,
बन बिहगोक मधुर स्वर, कोमल और सरल सिन्धुआका सुरीला गान
नव प्रस्फुटित कमलका घन और सुकुमार शिशुओंक मुख अमृतमय
अमृतधारास जीवनका यहा स्रोते हैं ॥१॥

मन्द-मन्द बहनबाला शीतल पवन सवा मुन्दर चन्द्रमा, दूध-सी
छफेद ब्योस्ना, नीर-दानमें कुम्भक मममाला उपाका कोमल और मधुर
आलाक और नए कोमल पत्तोंपर गिरी हुई धवनमकी बूँद अमृतमय
अमृतसातमें विश्वका डुवा देती हैं ॥२॥

टिमटिमाते और जगमगाते हुए सारे टपाटप गिरती हुई
मेघमालाकी धारा एक तमका नाश करनेक लिए तुम्हारी शक्ति दौड़ती
ह। अन्धकारसे मुक्त प्रसन्न अबनि पर्वतोंसे आते हुए झरन दूर तक
उछलनबाले प्रपात, अमृतमय अमृतके स्रोतस जीवनको अर्बुदित कर
रहे हैं ॥३॥

मैं तो अमृत सागरकी एक बूँद हूँ सिन्धु छोड़कर मैं आकाश
पर उठी थी वहाँस गिरकर अमृतकी धारामें मिली हुई हूँ। उस
सागरकी ओर गति धील हो रही हूँ यहाँमें यदि पापके तापसे तापित हो
कर सूख आऊँगी तो उस समय भी धवनमकी बूँद होकर ही गिरूँगी।
अमृतमय अमृतधाराक साथ सागरमें मिलकर एकाकार हो जाऊँगी ॥४॥

बिश्वनाथद्वार करुणा कम्बर
 मधुशर जन्म स्थळ
 घाहिं क्षर प्रति उक्ते कले गति
 पाद्वयु करुणाधळ रे जीवम !
 हेलेहे तु सान करुणानिघान राग्यरे करिछु बास
 बडाइले कर ताकू धोपयर
 सामे म हेबु निराश रे जीवम !
 सर्पबध्न क्षम मुस्तरे सन्नम बेले बोलिषाए माटि
 ज्ञानमघटे मधु न सागिले स्वाहु
 ज्ञान गब पिअ बाटि रे जीवम ! ॥४॥

विद्वानामकी हृदय रूपी गुफा ही मधुर झरनेका अम-स्मान
 ह। इस झरनको देख कर यदि ऊपर देखोगे तो विद्व-बन्धका
 दशनकर पाभोग। तेरे छोट होने पर भी करुणामयके राग्यमें
 तेरा निवास है। हे जीवन! हम बड़ाभगे तो चरण पानमें
 नियत नहीं हागे। साँप काटे हुए आदमीके मुखमें नमक देने पर वह
 उसे मिट्टी बताता है। इसी प्रकार यदि मूखको यह ज्ञान अमृत तुल्य
 न लगे तो हे जीवन! उस ज्ञान रूपी वूटी भाँल कर पिलाया ॥४॥

१३ ताकु मध्य बोलिपान्ति धर्म अवतार !

मन यार ध्यस्त सवा परस्व हरने,
घन यार बिबळित गणिका चरने
खीबन या लक्ष लक्ष लोकचूर भार,
ताकु मध्य बोलिपान्ति धर्म अवतार ॥१॥

बिबया मार मोड़ पाए धर्मनीति मुण्ड,
बुद्धि यार करुयाए सत सत्य गुण्ड,
घने कीत हेउयाए याहार बिचार,
ताकु मध्य बोलिपान्ति धर्म अवतार ॥२॥

सुबग हरम करि ताम्ब करे बान,
घने करियाए प्रभु सस्तोय बिधान,
बाडिबाहु बोय बिए नाना उपहार
ताकु मध्य बोलिपान्ति धर्म अवतार ॥३॥

अमण चरब पाइ पाइयाए भता,
खाइयाए मोड़ि ऐने बरिखरु मया,
करुयाए लमतार अपय्यबहार,
ताकु मध्य बोलिपान्ति धर्म अवतार ॥४॥

बहिर्गत होइयाए घर, दुम्य करे
दागड़ दागड़ द्रव्य भाणि घरे भरे,
सेहि द्रव्यमान पुनि बेलाए बजार,
ताकु मध्य बोलिपान्ति धर्म अवतार ॥५॥

१३ उसे भी धर्मवितार कहा जाता है !

जिसका मन परस्व अपहरणमें हमेशा व्यस्त रहता है, जिसका धन गणिकाके चरणसे कुचला जाता है, जिसका जीवन साबों लोगोंके मारसे बचा रहता है उसे भी धर्मका अवतार कहते हैं ! ॥१॥

जिसकी विद्या धर्मके नियमोंका सिर मूड़ती रहती है जिसकी बुद्धि सैकड़ों सत्त्योंको धूर्ण करती रहती है, जिसके विचार धनसे भोख लिए जाते हैं, उसे भी धर्मका अवतार कहते हैं ! ॥२॥

जो स्वर्ण हरण कर ताँबा दान देता है जो धनसे अपने प्रभुको सन्तुष्ट करता है अपने दोष छिपानेके लिए जाना घेंट देता है, उसे भी धर्मका अवतार कहते हैं ! ॥३॥

प्रमग्न-अर्चके लिए जो भत्ता प्राप्त होता है, उसे हड़प जानेवाला दरिद्रोंका पका मरोड़ कर रक्त घूसता है समताको जो बरबाद करता रहता है उसे भी धर्मका अवतार कहते हैं ! ॥४॥

धाली हाथोंसे धरसे निकला हुआ गाड़ियोंसे धन लाकर घर भर ले, फिर बाजारमें उस धनका प्रदर्शन करे उसे भी धर्मका अवतार कहते हैं ! ॥५॥

१४ भारती-भावना

गोमक-मण्डले नाथे सख करि
 कहन्ति भारती-किशोरी
 भारत-मण्डले याहा कस नाथ
 मनु हेउनाहिं पाशोरि,
 गोपेन्द्र, छले जाति कुल नासिल,
 याहा पिता माम्भ-निमत्त तहिंरि
 निज प्रमता प्रकासिल ॥१॥

बिकर्म हराइ बिकर्म उराइ
 बदीभूत कस सकळे,
 बासर घामिनी यापि न पारिकु
 तुम्भ परसेबा न कसे,
 तहिंरि, उदारपण बेसाइस,
 घन मम पण गर्भे भेषि करि
 परसेबन शिष्याइस ॥२॥

तुम्भ हासे हास, तुम्भ भाये भाप
 रहिका तुम्भ परे मति,
 तुम्भ कथा बिना जगतें माम्भर
 रहिसा नाहिं मग्य मति,
 गोपेन्द्र, तुम्भरि इगिते जासिले,
 तुम्भ परे माति निज गउरब
 निजर चरण इळिले ॥३॥

१४ मारती-भावना

[यह पूरी कविता लिख्ट है। हममें एक ओर जहाँ भगवान् कृष्णकी स्तुति है, वही दूसरी ओर ब्रह्मोंके प्रति भारतीय जनताका आश्रय भी व्यक्त है। पाठकोंकी सुविधाके लिए लिख्ट शब्दोंका सूक्ष्म अर्थ प्रत्येक छन्दके अनुवादक नीचे ही दिया गया है।]

गोसोक घाममें प्रभुको उख्य कर भारतकी ललनाएँ कहती हैं—
हे माय, भारत भूमिमें तुमने जो लीलाएँ कीं, वे कभी भुलाई नहीं जा सकतीं। हे गोपन्द्र छल करके तुमने हमारी जाति और कुल नष्ट किया है। जो भी हमारा अपनापन है उस पर तुमने अपनी प्रभुताका प्रकाश किया है ॥१॥

गोसोक मण्डले—द्वीपाम्तरमें ब्रह्मण्ड। गोपेन्द्र—श्वेत-द्वीपके अधिवासी ब्रह्मण्ड।

वसस पराजित कर, कुकर्मस भय दिखा कर, सबको अपने वसमें कर लिया है। तुम्हारी परण-सवा किए बिना हमें दिन रात चैन नहीं है। उसपर फिर तुमने उदारता की है हमारा घम-मन उदरस्य कर तुमने पर-सेवा करमा सिखलाया है ॥२॥

परम-वेष्टि करि—कर्ममेष्टी करकारी बनाकर।

तुम्हारी हसीमें हँसी है और तुम्हारी बातोंमें दात। इस प्रकार तुम्हारे परणोंमें मन रमा रहा है। तुम्हारी चर्चा सेवाने बिना ससारमें हमारी दूसरी गति नहीं है। हे गोपेन्द्र, तुम्हारे निर्वेससे ही हम चल रही है। तुम्हारे मदसे मतवाली हाकर हमने अपने गौरवको अपने ही पैरोंसे कुचल दिया है ॥३॥

गुम्न बरे—तुम्हारे मदमें।

अशने बसने वायने स्वपने
 तुम्ह पदे मन रहिला,
 मदन बेखिले क्षणिक बिच्छ
 शीयनत आम्ह बहिमा,
 गोपेद्र, बाण तुम्हे सब हुन्दर,
 तुम्ह भ्रातम बासम काशन
 समस्त दिशिमा सुन्दर ॥४॥

तुम्ह कपारे मधुर रहिसा
 करि नेस हुब कळगा,
 तुम्ह बदनक कपा न स्फुरिले
 सब याक हेसा असया,
 गोपेद्र, निम वास द्विप मणिर्मु,
 मन्त्ररे मोहित तन्त्रर तुम्ह
 महल कवडि गणिलु ॥५॥

आम्ह क्षीर सर कबचोरे पुष्ट
 बळकु तुम्ह भनाइ,
 भय तमि सिना चारमणि घीरे
 करि न पारिले लडाइ,
 गोपेद्र, एकथा कहिविस पाई,
 जय गबे माति केडे कपा कल
 पूब प्रतिज्ञा अनुयायो ॥६॥

गान्धिनीज-काण्ड घटाइला विनु
 स्नेह गण्डि हेसा दिग्विळ,
 तहुं जगागला किस हेस तुम्हे
 सहि पूबे मबा कि पिल,
 पान्बाळे, परिषय हेसा याहार,
 माहा सागि हेसा सबळ कळह
 माम बडाइस ताहार ॥७॥

भोजनमें, परिधानमें, दायनमें और स्वप्नमें भी तुम्हारे चरणोंमें ही मन लगा रहा। मदनको क्षण मात्र भी देखने पर विरह हमारे जीवनको बलाने लगा। हे गोपेन्द्र ! तुम प्रपञ्चको जानते हो। तुम्हारा उठना बैठना बातचीत, व्यवहार सभी सुन्दर लगते हैं ॥४॥

मदन बेचिसे—घराब न होमवे।

तुम्हारी वाणीमें मधुरता है। तुमने हृदयको माप लिया है। तुम्हारी सारी बातें न सुनने तक सभी बखोना (फीका) लगता ह। अपना वास भी हमे अहर-सा ही प्रतीत होता है। तुमने मात्रसे मोहित कर लिया है। तुम्हारी मुरलीके लिए हमने अपनी महत्ता खोई ॥५॥

बात—बसत। तन्त्रे तुम्हारे—मिच्छे कपड़ेक किय।

हमारे दूध, मक्खन और मसालेसे परिपुष्ट तुम्हारी शक्तिको देखकर बलवान और पुस्य भी तुमसे मुड करनेमें समर्थ नहीं हैं। हे गोपेन्द्र ! यह कौसी बात कही ! बिजयमें उमत्त होकर अब तुम क्या कहमें बने हो, तुम तो अपनी प्रतिज्ञाको निभानेबास हो ॥६॥

आरमपि बीरे—मनीनके बीर। जय धर्म माति प्रतिष्ठा अनुपायी —
(मह) भारतको स्वाधीनता देनेकी प्रतिभृति भंग करनेको कश्य कर कहा गया है।

जिस दिन अकूरने यह सब किया उसी दिनसे स्नेह-गाँठ ढीली पड गई। उसीसे मासूम हो गया कि पूर्वमें तुम क्या हो गए हो। जिस पाञ्चालीके लिए यह सारी कसह हुई, उसका भान तुमने बढ़ाया इसीसे तुम्हारा परिचय मिस गया ॥७॥

पश्चिमीय-काण्ड-भाग्यौ नित्र काण्ड—(परी) महारना माघीका सत्याग्रह आन्दोलन। पाञ्चाल—भृगुतरमें गौरीकाण्डके समय अल्पियावाका बाप।

४ उड़िया मे—५

गान्धिमौज कण्ठ गजना न करि
बम्बिपुर कसे गमन,
कान न पातिल दूरे पाइ कर्मु
येते हाहाकार कन्दन;
जगते, कीरतिर बामा उड़िसा,
पार निभा मेष्टि कउशळ बळे
उपसेनाजम्ब वडिला ॥८॥

परे जभागसा तुम्भ माम्भ सेव
तुम्भे बबीपास्तरमिबासी,
बाल्य जीबनरे माम्भर धमरे
बडिबा पाई पिस भासि,
गोपेन्द्र, तुम्भे हेळ बिडबिडियात
माम्भ सगे एक बेभारे बळिले
हेचछि एजे सानजात ॥९॥

बाकित न शिर्मु तुम्भ घरे पाइ
भासिपिस मिज सामरे,
सरळ हृदय भणि सिना घरे
रसितु अति स्नेहाबरे,
गोपेन्द्र, कहिब कस उपकार
पाहा करिअछ मिज स्वार्थ पाई
न पिसा माम्भ बरकार ॥१०॥

तुम्भर माभरे तुम्भर पराये
मुपळमान पिसे भासि,
कोपन स्वभाव हेसे हे माम्भर
समस्ते पिसे नाहिं घासि,
करिसे न पिसे बसन हरण
दुरपद-मुता चिन्तिवार पाण
करि न पिसे से प्ररण ॥११॥

अक्रूरने अपने कष्टकी परवाह न की और कुम्भकी नगरीकी ओर प्रस्थान किया। हम लोगोंने बहुत हाहाकार किया। कितना दहन था ! किन्तु तुमने कान तक नहीं दिया। ससारमें तुम्हारी कीर्ति-पताका उठी। तुम्हारे कौरवसे सब विपत्ति दूर हुई और उग्रसेनका आनन्द बढ़ा ॥८॥

पाण्डवीय कष्ट = पाण्डवी-निब-कष्ट—महात्मा गौधीका अपना—कष्ट। बम्बिपुर—
काण्णार। पार निमाँ मेष्टि कञ्जल्ल बळे—पाण्ड्यामेष्टकी सहायतासे। उग्र
सेनालन्द—प्रचण्ड सेनाकी प्रसन्नता।

धाममें तुम्हारे और हमारे बीचके भदका कारण मालूम हुआ कि तुम द्वारिकाके ही निवासी हो। बाल्य कालमें हमारी सम्पत्तिसे बढ़नेके लिए आए थे। हे गोपेन्द्र, तुम बिस्व विख्यात हुए। इतने दिम तक हमारे साथ थले, आज हमारे साथ थलनेमें मान सगती है ॥९॥

बबीपात्तर-निवासी—दूर देश (बिटिस द्वीप) में रहनेवाले।

हम तुमको अपने घर बुलानेके लिए नहीं गई थीं। तुम्हीं अपने स्वार्थके लिए आए थे। तुमको अति सरल हृदयवाला जानकर ही तो स्नेह-आदरसे हमने तुम्हें अपने घरमें रखा था। हे गोपेन्द्र, तुम कहोगे कि तुमने हमारा उपकार किया है। किन्तु तुमने जो भी किया हो अपने स्वार्थके लिए ही हमें उसकी बरूरत नहीं थी ॥१०॥

तुम्हारे पहल तुम्हारे ही समान बकराम आए। वे ओधी वे लेकिन उन्होंने हमारा कुछ बिगाड़ा नहीं था। उन्होंने वस्त्र-हरण नहीं किया था। और प्रार्थना करनेवाली द्रौपदीके पास वस्त्र नहीं भजा था ॥११॥

मुषलभान—मुसलमान। बसन हरण—यही भारतीय कार्पास—चित्तिका नाम।
दुरपयमुता चिन्तित कार पाश करि न बिने से प्रेरण —दूर पर = दूर देश अपना
इपलैडक मुना = मूतकी चिन्ताकर कार पाश = कारपास = कार्पास नहीं भजा था।

आम्भ कर धरि चासि-चासि कमे
 तुम्भ पराक्रम बहिसा,
 तुम्भ बिना आम्भे चलि म पारिबु
 कया सुनिबाहु पडिसा,
 बीबन, बीबिका तुम्भरि हातरे,
 बेइ तुम्भ पर आम्भारे रहिसुं
 कागि मरुआछु कातरे ॥१२॥

पण्य मारिबार धरम तुम्भर
 बिवकूट कर जाहार,
 तुम्भ पुठनारी-महिमा करइ
 नारी गठरब प्रसार,
 तुम्भर, धर्म कळिबार बुष्कर,
 बन्धु बोलि याहु सनाबळ बेस
 प्राण न रहिसा तांकर ॥१३॥

कृप्या कृप्य घेनि भारत बिप्लव
 उपुजिना कपट पागे,
 यहि कृप्य, तहिं बिजय निबजय
 रहिगसा सोक बिडबासे,
 बोइसे, बुऱ्यासन मूळ कारण,
 बिघाता बिधान संघनीय मुहे
 केमन्त हुमन्ता बारण ? ॥१४॥

बिराट बिभव सुष्टे भोषकसे
 कौसळे पाण्डुर बन्धने,
 दोये अधिकारी निजे अपसरि
 रहिसे चरन बन्धने,
 असर, मिळिसा याहा दोयकाळे,
 पूर उळ बळ होइसा बिदित
 नर बेबा हसा कपाळे ॥१५॥

हमारे हाथ पकड़ धीरे-धीरे बसनेके ही कारण तुम्हारी शक्ति बढ़ी तुम्हारे बिना हम लोग जी नहीं सकेगी, अन्तमें यही बात सुननेको मिली। जीवन और जीविका तुम्हारे हाथ दे एवं तुम्हारे घरणोंकी भाषा रखकर रो रो कर मर रही हैं ॥१२॥

कर परि—इस धारण कर कर (टेक्स) की सहायतासे।

बैस मारना तुम्हारा धर्म है और विपयान करना तुम्हारा काम है। पुतनाकी महिमा बढ़ाई, जो नारी-नीरवका प्रसार करती है। तुम्हारा अन्त पाना बड़ा दुर्गम है। बन्धु मामकर जिसको सौय बल दिया, उसीके प्राण गए ॥१३॥

बन्धु मारिबार धरम तुम्हारे —गी इत्या तुम्हारा धर्म है। विपकूट कर आहार —तुम विस्तुट जाते हो। पुतनारी-महिमा करइ नारी बजरव प्रसार — तुम्हारी पवित्र नारी-महिमा (नारीकी पवित्रता) नारी-नीरवको बढ़ाती है।

कृष्ण और कृष्णाको लेकर कपटी पासोंसे भारतमें विफल पदा हुआ। जहाँ कृष्ण हैं वहाँ बिजय है—यह विश्वास लोगोंमें छा गया। कहते हैं दुःशासनही उसकी अड़ था परन्तु विधिका विधान अलबनीय है। यह कैसे दूर किया जा सकता है? ॥१४॥

कृष्णा कृष्ण धेनि—जातीय नर-नारीको लेकर। कपटपात्रो—छल करके। यहि कृष्ण—यहाँ जातीय होते हैं। दुःशासन—अराज शासन-व्यवस्था।

पाण्डव पुत्रोंन कौसलसे विराट सुख-वभव भोगा। शोपमें स्वयं हटकर सेवामें नियुक्त रहे। अन्तमें जो उत्तर मिला उससे पूर्ण कौसल मासूम हो गया और केवल सिरपर हाथ धरना ही रह गया ॥१५॥

विराट विजय—विराट देशका विपुल विजय। पाण्डुर मन्वने—पाण्डु बर्षवासे अविज। कर देना हुआ कपटो —कर (टेक्स) देना निरिच्छत हुआ अस्तकार हाथ धरकर हाथ-हाथ करना।

कवि-श्री माता

बड़-बड़ बोरे गुरु मन्त्र बाह
 पाण्डवकु बय बाँधिले,
 तुम्ह अपमाने दुःख वहि मने
 बुद्धिधन बोध बाँधिले,
 तुम्हरे, मकति पाए उमङ्कर,
 तुम्हरे सबिच्छा अपाण्डव पसे
 न हेला केने सुमकर ॥१६॥

न बोधि अलरे भयरे लक्षरे
 उचित स-कार मरिब,
 लघु गुरु हस्य बोधि या अक्षय
 हेबा योग्य ताहा करिब,
 पाठक, सेहि भार तुम्ह हासरे,
 हेब बिचारक बोधि बिरचक
 जगाउछि मिति मापरे ॥१७॥

बड़े-बड़े वीर कौरवोंका अन्न खाकर पाण्डवोंकी विजय-कामना करने लगे । दुर्योधनसे तुमको अपमान मिला, इससे बुद्धी हो कर दुर्योधनको दोषी माना गया । दोनों दल तुम्हारी भक्ति करते थे । तुम्हारी हृषीकी दृष्टि कौरवोंके पक्षमें कभी नहीं हुई ॥१६॥

बुद्धि मग्न बाह — भारतीय अन्न खाकर (भारतीय होते हुए भी) । पाण्डवद्वय बहिष्कृत — दुर्योधनकी विजय-कामना की । तुम्हें अपमानने हुआ बहिष्कृत मने दुर्योधन ही बहिष्कृत — तुम्हारी पक्षधरसे बुद्धी होकर दुर्योधन — (जिसके साथ युद्ध करना तुम्हें होता है ।) अर्थात् भारतीय वीरोंका दोष निकालने सम । अर्थात् — भारतीय ।

अक्षरको दोषी न मान ठीक अर्थके लिए जहाँ जिस सकारकी अक्षर हो व्यवहार करना । सधु, गुरु, ह्रस्व, दीर्घ — जहाँ जिसकी अक्षर हो, वहाँ उसका व्यवहार करना । हे पाठक वर्ग ! यह भार तुम पर है । तुम इसके विचारक हो, इसलिए लेखक नत मस्तक हो कहता है ॥१७॥

